

राजनीति की सुचिता-गरिमा अब खत्म!

तस्वीर में आपको दो लोग दिख रहे होंगे, एक हैं पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी और दूसरा व्यक्ति वो है जिसका पुत्र आज चर्चा का विषय बना हुआ है। जी हां, ये सोनम वंग्याल हैं सोनम वांगचुक के पिता। इन्होंने 1984 में लद्दाख के आदिवासियों के अधिकारों के लिए भूख हड़ताल शुरू की थी, 6 दिन के बाद जब खबर इंदिरा गांधी तक पहुंची, तो सब काम छोड़कर लद्दाख पहुंचीं। वंग्याल से मिली, वहां के लोगों से बात की। उनका अनशन तुड़वाया और हर मांग को संवैधानिक तरीके से पूरा करने की बात की! आज उन्हीं वंग्याल का बेटा जिंदगी और मौत के बीच खड़ा है, लेकिन सरकार और राजनीतिक तंत्र पर कुछ फर्क नहीं पड़ रहा। मानवीय संवेदना और राजनीतिक संवाद कहीं गुम हो गए। क्या इसी राजनीतिक प्रतिशोध और मानवीय संवेदना-शून्य व्यवहार की कल्पना इस देश ने की थी?



भ्रष्टाचार और फासी शक्तियों के विरुद्ध शंखनाद

नवयुग

R.N.I. No. 15990/67

संस्थापक संपादक: स्व. श्री चिंजीव जोशी 'सरोज'

हिन्दी पाक्षिक

वर्ष-60 अंक-3

जयपुर, बुधवार, 15 जुलाई, 2026

मूल्य- 10 रुपए

पृष्ठ- 8

मंदिरों से दान चोरी की खबरें विकास की नींव कुतरता भ्रष्ट सरकारी अमला लापरवाह और सत्तालोलुप राजनीतिक तंत्र जिम्मेदार!



इस पक्ष का विशेष सम्पादकीय विनोद जोशी द्वारा



एक तरह विकास और विश्व गुरु होने के महामंत्र का अनवरत जाप जहां देश के मीडिया में छाया हुआ है, वहीं दूसरी तरफ सड़क, पुल, स्कूल भवन से लेकर मंदिर-मठों में श्रद्धालुओं के दानधर्म पर पड़ते डाकों की खबरों से भरे समाचारपत्र स्थिति का यथार्थ बखूबी बयां कर रही हैं। कहीं सरकारी स्कूलों के भवन ढहने की खबरें हैं तो कहीं हाल बने पुल या सड़क के पहली बारिश में बह जाने की खबरें आम हैं। आश्चर्य तो यह है कि तब भी उन्हीं समाचारपत्रों के दूसरे पृष्ठ विकास के सरकारी दावों को माथे पर चिपकाए बेशर्मी से महिमामंडन कर रहे हैं। हद तो यह है कि अयोध्या के भगवान राम से लेकर हरिद्वार के मनसा मंदिर, बद्रीनाथ धाम मंदिर से होते हुए गुजरात के अम्बाजी मंदिर तक कहानी सिर्फ एक है और वो है चोरी, डकैती वो भी खुलेआम!

और बात विकास की!

जिस दिल्ली-देहरादून इकोनॉमिक कॉरिडोर को आधुनिक भारत के तेज, सुरक्षित और विश्वस्तरीय बुनियादी ढांचे के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया, उसकी सड़क उद्घाटन के महज ढाई महीने बाद पहली ही बरसात में धंस गई। सड़क इस तरह धंसी कि कई वाहन दुर्घटनाग्रस्त हो गए। सौभाग्य से कोई जनहानि नहीं हुई, लेकिन इस घटना ने एक बार फिर विकास की चमकदार तस्वीर के पीछे छिपी कड़वी सच्चाई को उजागर कर दिया। प्रश्न यह है कि करोड़ों रुपये की लागत से बनी सड़क पहली ही वर्षा का सामना क्यों नहीं कर सकी? क्या निर्माण में गुणवत्ता से समझौता किया गया? क्या जल निकासी की समुचित व्यवस्था नहीं थी? या फिर यह भ्रष्टाचार, लापरवाही और जवाबदेही के अभाव का परिणाम है? यह कोई अकेली घटना नहीं है। पिछले कुछ वर्षों में देश के विभिन्न राज्यों में नई सड़कों, पुलों, फ्लाईओवरों और सार्वजनिक भवनों के ध्वस्त होने की घटनाएं लगातार सामने आती रही हैं। बिहार में एक पखवाड़े के भीतर लगभग एक दर्जन छोटे-बड़े पुलों का गिर जाना पूरे देश को झकझोर गया था। एक ही दिन पांच पुल-पुलियों का धराशायी होना केवल तकनीकी विफलता नहीं, बल्कि शासन-प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार का जीवंत प्रमाण था। गुजरात के मोरबी पुल हादसे में 135 लोगों की जान चली गई। कोलकाता के विवेकानंद फ्लाईओवर के गिरने से अनेक परिवार उजड़ गए। दिल्ली के इंदिरा गांधी अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे के टर्मिनल-1 की छत गिरने की घटना और मुंबई के घाटकोपर में विशाल होर्डिंग गिरने से हुई मौतों ने भी

शेष पृष्ठ 2 पर

आज के कैसे ये दो भारत?

हरिशंकर व्यास

मैंने वह समय देखा है जब चौधरी चरण सिंह ने 'असली भारत' की बात करते हुए प्रधानमंत्री पद की शपथ ली थी। फिर वह भी समय जब हिंदू भारत की हवाबाजी में नरेंद्र मोदी ने शपथ ली। दोनों समय का कुल परिणाम क्या? मोटामोटी राम-राम सा बोलने वाले आम हिंदुओं से धोखा। कथित असली भारत का किसान आज भी बेचारा है। वहीं राम के नाम पर संघ, भाजपा और नरेंद्र मोदी को जिताने वाला हिंदू अपने धर्म की ऐसी-तैसी होतें देख रहा है! बिचारें 1990 की राम रथ यात्रा से 2026 में राम मंदिर के कुल 36 साला इतिहास पर? गांव-गांव से शिला-चंदा एकत्र करने से ट्रस्टियों की चढ़ावा चोरी के कथित सांस्कृतिक पुनर्जागरण वाले मौजूदा हिंदू राष्ट्रवाद पर?

इतिहास में गजनवी मंदिरों को लूटने के लिए बार-बार भारत आता था। वहीं हिंदुस्तान अब बतौर हिंदू राष्ट्र मंदिरों को लूटने यानी चढ़ावा खाने की आधुनिक व्यवस्थाएं लिए हुए है।

क्या मैं गलत हूँ? क्या यह विचित्र हिंदू भारत नहीं है? वह भारत जिसमें संवेदना, शर्म, जिम्मेदारी, उत्तरदायित्व कोई नहीं है। सभी आंख-नाक-कान बंद किए टूट भाव, टूट हिंदू राष्ट्र बना बैठे हैं। मैंने गुरुवार को एक टीवी चैनल पर विरोधी नेता अखिलेश यादव, कांग्रेस नेता अजय राय की आलोचनाओं, विरोध के जवाब में भगवाधारी मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के कहे वाक्य सुने। पहली बात, उनके चेहरे पर रती भर शर्म, ग्लानि, खेद नहीं था। उन्होंने प्रभु राम की मर्यादा के हवाले कहा, हमने मर्यादा का पालन किया! ये लोग

(अखिलेश, कांग्रेस) लाठी-गोली चलाते थे। इनके दोगले चरित्र को देखो जे वे लोग कह रहे हैं कि अयोध्या में राम भक्तों का अपमान हो गया। क्या तब अपमान नहीं हो रहा था?... ये लोग नहीं चाहेंगे कि अयोध्या का नाम हो!



पता नहीं आदित्यनाथ ने गोरख परंपरा में योगी, पीठाधीश्वर/संरक्षक, महंत, संत के कर्तव्य, भूमिका को पढ़ा है या नहीं? इसमें लिखा है कि देवस्थान की रक्षा, दान-संपत्ति का संरक्षण, मठ की प्रतिष्ठा की रक्षा नाथ परंपरा का परम धर्म है। और ध्यान रहे, बतौर मुख्यमंत्री भी आदित्यनाथ का जिम्मा अलग है। उस नाते उनकी नाक के नीचे भक्तों द्वारा दिए गए दान और मंदिर की आय का उपयोग धर्मार्थ व संस्थागत उद्देश्यों के लिए होना था या चोरी का माल बनना था? क्यों अब यह जांच, एसआईटी की बात कर रहे हैं? जब अपने राज की परंपरा में उन्होंने सीधे एनकाउंटर, बुलडोजर का रामराज्य बनाया है तो चंपत राय, अनिल मिश्रा, गोपाल राव, ट्रस्ट पदाधिकारियों के लिए एसआईटी क्यों, उनके सीधे एनकाउंटर का उनका बनाया राजधर्म कहां गया?

ईमानदारी से सोचें, अयोध्या में संघ के स्वयंसेवकों के ट्रस्ट की देखरेख में चढ़ावे की चोरी से भयावह राम के नाम की बदनामी दूसरी क्या है? बाबर ने तो मंदिर ढहाया था, चंपत राय एंड पार्टी ने हिंदू की उस आस्था, गर्व पर बुलडोजर चलाया है, जिसमें राम के जन्मस्थान मंदिर में, कथित हिंदू राष्ट्र के कथित रामराज्य में चढ़ावे की चोरी का एक अकल्पनीय अपराध हुआ है।

इसलिए सवाल है, गोरख संप्रदाय के एक महंत के मुख्यमंत्रीकाल में, आरएसएस के प्रचारकों के ट्रस्ट की व्यवस्थाओं में चोरी की

यह बदनामी किस भारत का प्रतीक है? मेरा मानना है कि कबीरदास का यह दोहा आज के हिंदू भारत के इस नए अर्थ का वाहक है: राम नाम की लूट है, लूट सके तो लूट। अंत काल पछताएगा, प्राण जाएंगे छूट! अर्थात् राम नाम

से हिंदुओं को उल्लू बनाकर मोतियों का खजाना पाया है तो शर्म छोड़ो, संवेदनशीलता, शालीनता, मर्यादा, बुद्धि, सत्य सभी त्यागो और जितना हो सके हिंदुओं की आस्था, भरोसे को लूटो। सत्ता के इस अमूल्य अवसर को छोड़ो नहीं। क्योंकि समय खत्म होगा तो पछतावे के अलावा कुछ नहीं होगा।

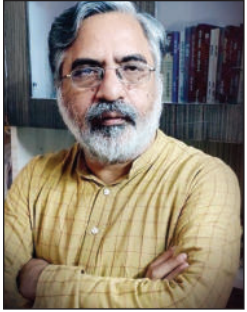
तभी हिंदुओं के कलियुग का यह वह मौजूदा हिंदू भारत है, जिसे दो-ढाई हजार साल के ज्ञात भारत इतिहास में खोजें तो मालूम होगा कि हिंदुओं के साथ ऐसा तो पहले कभी नहीं हुआ। दूसरे धर्मों ने जरूर उसे लूटा, पर हिंदू हमेशा अपने धर्म के सनातन सदाचार में जीता रहा। न कभी उसकी मार्केटिंग की, न उसे बेचा, न पंडितों में मंदिर के लिए दान, चढ़ावे को संगठित रूप से लूटने की धोखाधड़ी हुई। न ही आस्था-विश्वास से धोखा कर राजनीति और सत्ता पाने का इतिहास रचा। तभी आज चढ़ावा खाने-खिलाने का दानखोर नया भारत है तो दूसरी तरफ हमेशा की तरह वह सनातनी भारत भी है, जो गुजरे जमाने के इस गाने को याद कराता है, 'राम का नाम बदनाम न करो। राम को समझो, कृष्ण को जानो। राम ने हंसकर सब सुख त्यागो, कृष्ण ने कर्म की रीत सिखाई- तुमने फर्ज से आंख चुराई ज़ाम का नाम बदनाम न करो। नींद से जागो ओ मस्तानों। राम को समझो, कृष्ण को जानो!'।

'नया इंडिया' से साभार

हम सब कुछ सहन करने की आदत डाल चुके हैं!

फतवों और पाप विमोचन प्रमाणपत्र के आडम्बर की गिरफ्त में हम!

प्रियदर्शन



राम मंदिर में चढ़ावा-चोरी को लेकर चल रहा विवाद भावुकता से राजनीति तक की परिधि में पसरा हुआ है- किसी को भावनाएं आहत होने की फिक्र है तो किसी के सामने सवाल है कि इसका यूपी चुनावों पर क्या असर पड़ेगा। लेकिन जो एक बुनियादी चिंता इस पूरे मसले से सामने आनी चाहिए, वह सिरे से गायब है। दरअसल इस चढ़ावा-चोरी ने याद दिलाया है कि हम मूलतः भ्रष्टाचार या कई अन्य बुराइयों को चुपचाप सहने और अकसर उसमें शामिल रहने वाले समाज में बदल चुके हैं।

चढ़ावा-चोरी करने वाले लोग अगर भगवान से नहीं तो भक्तों से तो डरते- कि अगर यह पकड़ में आ गया तो उनका सामाजिक बहिष्कार शुरू हो जाएगा। लेकिन

ऐसा कोई डर उनके भीतर नहीं था। उनमें से कुछ लोग अगर पकड़े गए और जेल की सलाखों के पीछे हैं तो भी यह संदेह बचा हुआ है कि बहुत सारे चढ़ावा-चोर बाहर हैं और पकड़े गए लोगों को कड़ी से कड़ी सजा दिलाने की बात कर रहे हैं।

हमारा समाज धीरे-धीरे कुछ भी अनुभव करने की शक्ति खोता जा रहा है। मंदिर में चोरी हो, साम्प्रदायिक हिंसा हो, दुष्कर्म हो, भ्रष्टाचार हो- हमें कुछ भी उद्देलित नहीं करता। करने को हम सबका विरोध करते हैं, सबके खिलाफ गुस्सा जताते हैं, लेकिन यह महज एक प्रदर्शन, एक दिखावा भर होता है कि दूसरों ने देख लिया है कि हम चुप नहीं हैं। हम बस शोर सुनते और करते हैं और मान लेते हैं कि इसी में हमारे सरोकार झलक रहे हैं। जिन मामलों की हम पर सीधी चोट पड़ती है, उन पर भी क्रोध जताने के अलावा कुछ नहीं करते-चाहे वह पेपर लीक का मामला हो या पेट्रोल में इथेनॉल मिलाने को लेकर चल रही बहस हो।

यहां से एक और सवाल पैदा होता है। क्या इस पाखंड के पीछे हमारे संस्कार भी हैं? दुनिया भर के धर्मों की यह समस्या रही है कि

उनमें ईश्वर और भक्त के बीच एजेंट बैठे होते हैं, जो भरोसा दिलाते हैं कि ऊपर वाला बहुत कृपालु है और वह सबके पाप धोता रहता है। इंग्लैंड में एक दौर में पाप-विमोचन प्रमाण-पत्र बेचे जाते थे। चौदहवीं-पंद्रहवीं सदियों में चर्च में निहित भ्रष्टाचार के विरुद्ध जॉन विकलिफ से लेकर मार्टिन लूथर तक के संघर्ष ने प्रोटेस्टेंट चर्च की बुनियाद डाली। हिंदू धर्म में भी पाप-निवारण के बहुत सारे उपाय और कर्मकांड प्रचलित हैं।

इस्लाम में भी मौलवियों के अजीबोगरीब फतवों ने सच्चे मुसलमानों का जीना मुश्किल कर रखा है। ऐसे धार्मिक पाखंड व वर्चस्व के साथ जब राजनीति जुड़ जाती है तो मंदिर-निर्माण से लेकर राष्ट्र-निर्माण तक की परियोजनाएं अप्राशयिक पवित्रतावाद की आड़ में तमाम तरह के धतकरोमों से आगे बढ़ाई जाती हैं। इसमें सच्चा धार्मिक व्यक्ति ही सबसे अकेला पड़ जाता है।

क्या भारत में भी इन दिनों यही खेल चल रहा है, जिसे इस उत्तर-आधुनिक समय की विडम्बनाएं कुछ और बेलगाम होने में मदद कर रही हैं? अब बाजार वह नियामक शक्ति है, जिसे पता है कि कब

राजनीति का इस्तेमाल करना है, कब धर्म का और कब खेल का। चढ़ावा-चोरी भी इस बाजार के लिए एक विक्रय योग्य विषय ही है, जिसमें एक तरफ राजनीतिक समीकरण हैं तो दूसरी तरफ निजी आस्थाओं का हवाला।

इस लड़ाई में जीत उसकी नहीं होगी, जो यह भरोसा दिलाएगा कि वह चढ़ावा-चोरी पूरी तरह रोक देगा या मंदिर की पवित्रता बनाए रखेगा, बल्कि उसकी होगी, जिसके होने से एक बड़े तबके में अपने हितों की सुरक्षा का आश्वासन होगा। एक बहुत स्थूल- मोटी चमड़ी वाली- स्वार्थपरता शायद इन दिनों हमारा मिजाज बनी हुई है और हमें इस बात से बहुत फर्क नहीं पड़ता कि दुनिया में क्या हो रहा है और कैसे हो रहा है। दुर्भाग्य से जब उसकी मार हम पर पड़ती है, तब हमें समझ में आता है कि हमारी निर्लिप्तता या तटस्थता ही हमारी वास्तविक शत्रु है।

हम भ्रष्टाचार या अन्य बुराइयों को चुपचाप सहने वाले समाज में बदल चुके हैं। चढ़ावा-चोरी करने वाले अगर भगवान से नहीं तो भक्तों से तो डरते- कि अगर यह पकड़ में आ गया तो सामाजिक बहिष्कार शुरू हो जाएगा।

पैसा सुविधा देता है, खुशी नहीं

04.07.2026

आज के समय में एक धारणा इतनी गहरी हो गई है कि हम उसे लेकर सवाल ही नहीं करते। वह धारणा कहती है कि अगर पैसा आ जाए, तो सब ठीक हो जाएगा। और यह पूरी तरह गलत भी नहीं है। पैसा जरूरी है। पैसा सुविधाएं देता है। पैसा उस चिंता को दूर करता है जो रात को नींद छीन लेती है झुंझुंझुं कैसे भरेगा, बच्चों की फीस कैसे होगी, बीमारी में क्या होगा। यह एंजाइटी वास्तविक है और पैसा उसका वास्तविक समाधान है।

पर एक सवाल है, जो हम नहीं पूछते - क्या जिनके पास पैसा है, वे सचमुच सुखी हैं? उन्हें क्या कोई एंजाइटी नहीं?

अगर आसपास देखें तो उत्तर चौंकाने वाला है। बड़े-बड़े घरों में अकेलापन है। भरे-पूरे बैंक खातों के बावजूद भीतर एक खालीपन है। सफल दिखने वाले लोग रात को नींद की गोलियां खाते हैं। वहां तलाक हैं। वहां आत्महत्याएं भी हैं। वहां बड़ी बीमारियां हैं। यह समझना जरूरी है कि पैसों से मिलने वाली हर खुशी क्षणिक होती है। एक नई कार का उत्साह कुछ दिनों में टंडा पड़ जाता है, एक नया घर कुछ महीनों में साधारण लगने लगता है। यह मन की प्रकृति है।

वह हमेशा अगली चीज़ मांगता है।

तो फिर खुशी कहां है?

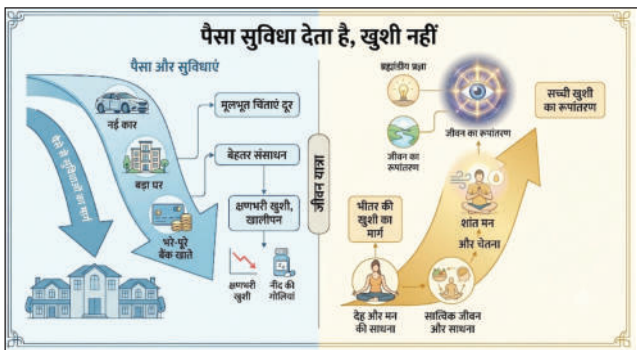
वेदांत एक गहरा उत्तर देता है। वह कहता है कि खुशी बाहर नहीं, भीतर है। और भीतर पहुंचने के लिए

तुम यह जान लेते हो कि तुम्हारे भीतर वही शक्ति है जिसने यह सृष्टि बनाई तब तुम्हें बाहर भटकने की जरूरत नहीं रहती। ईश्वर को खोजने के लिए किसी मंदिर की सीढ़ियां नहीं चढ़नी। बस भीतर उतरना है।

पर यह भीतर उतरना तभी संभव है जब देह और मन स्वस्थ हों। इसीलिए शरीर को तंदुरुस्त रखना केवल दिखावे के लिए नहीं। यह आत्म-साधना का पहला कदम है। सात्विक भोजन, नियमित व्यायाम, अनुशासित दिनचर्या - ये सब मिलकर वह आधार बनाते हैं जिस पर चेतना का महल खड़ा होता है। एक बीमार, थका, अस्त-व्यस्त मन ध्यान नहीं कर सकता। एक स्वस्थ, शांत मन ही भीतर की गहराई छू सकता है।

और जिस दिन ब्रह्मांडीय प्रज्ञा यानी वह cosmic wisdom भीतर जागती है, उस दिन जीवन का रूपांतरण होता है। तब निर्णय स्पष्ट होते हैं। तब दिशा अपने आप मिलती है। तब न सफलता अहंकार देती है, न असफलता तोड़ती है। तब जो भी पाना हो वह पाया जा सकता है। क्योंकि तब तुम उस स्रोत से जुड़े होते हो जहां से सब कुछ आता है।

जो खुद को केवल शरीर और पद मानता है उसे दुखी होने से कोई नहीं रोक सकता। और जो खुद को चेतना जान लेता है उसे दुखी करने की शक्ति किसी में नहीं होती।



पहले यह समझना होगा कि तुम वास्तव में हो कौन। तुम वे विचार नहीं हो जो मन में उठते हैं। तुम वे भावनाएं नहीं हो जो आती-जाती रहती हैं। तुम वह शरीर नहीं हो जो बदल रहा है। तुम वह पद नहीं हो जो कल था और कल नहीं रहेगा। तुम चेतना हो। वह शाश्वत, निर्मल, असीम चेतना जो इन सबको देखती है।

और यह चेतना कोई साधारण चीज़ नहीं है। यह उसी परम चेतना का अंश है जिसे हम ईश्वर, ब्रह्म, या परमात्मा कहते हैं। उपनिषद कहते हैं - अहं ब्रह्मास्मि। मैं ही ब्रह्म हूं। यह अहंकार का वाक्य नहीं है। यह सबसे बड़ी विनम्रता का वाक्य है। क्योंकि जब

प्रथम पृष्ठ का शेष भाग...

यह स्पष्ट कर दिया कि सार्वजनिक निर्माण की गुणवत्ता गंभीर संकट से गुजर रही है।

इन घटनाओं को केवल प्राकृतिक आपदा या भारी वर्षा का परिणाम बताकर जिम्मेदारी से बचा नहीं जा सकता। यदि पहली ही बारिश में सड़क धंस जाए, पुल बह जाए या भवनों की छतें गिर जाएं, तो यह प्रकृति की नहीं, बल्कि मानव निर्मित विफलता की एवं गहरे में पैठे भ्रष्टाचार की कहानी है। आधुनिक इंजीनियरिंग और तकनीक के इस युग में ऐसी घटनाएं अस्वीकार्य हैं। यह विकास नहीं, बल्कि विकास के नाम पर जनता के साथ किया गया विश्वासघात है। सड़कें और पुल किसी भी राष्ट्र की आर्थिक प्रगति की धमनियां होते हैं। इनके माध्यम से व्यापार चलता है, गांव शहरों से जुड़ते हैं, किसान अपनी उपज बाजार तक पहुंचाते हैं और आम नागरिक सुरक्षित आवागमन करते हैं। जब यही आधारभूत संरचनाएं असमय ध्वस्त होने लगें, तो केवल कंक्रीट और लोहे का ढांचा नहीं टूटता, बल्कि जनता का शासन और प्रशासन पर विश्वास भी टूटता है।

दिल्ली-देहरादून इकोनॉमिक कॉरिडोर की सड़क धंसने के मामले में राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ने संबंधित प्रोजेक्ट मैनेजर और टीम लीडर को निर्लंबित किया तथा निर्माण कंपनी को कारण बताओ नोटिस जारी किया। लेकिन प्रश्न यह है कि क्या केवल निलंबन से समस्या का समाधान हो जाएगा? अनुभव बताता है कि अधिकांश मामलों में निर्लंबित अधिकारी कुछ समय बाद बहाल हो जाते हैं या उनका स्थानांतरण कर दिया जाता है। जिन कंपनियों को काली सूची में डाला जाता है, वे कुछ समय बाद नए नाम से फिर सरकारी ठेके प्राप्त करने लगती हैं। परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार का चक्र लगातार चलता रहता है। वास्तविक समस्या जवाबदेही के अभाव की है। निर्माण की प्रत्येक प्रक्रिया-डिजाइन, सामग्री, तकनीकी परीक्षण और गुणवत्ता नियंत्रण के लिए जिम्मेदार अधिकारियों की व्यक्तिगत जिम्मेदारी तय नहीं होती। जब दोषियों को कठोर दंड नहीं मिलता, तब भ्रष्टाचार को अप्रत्यक्ष संरक्षण मिल जाता है। यही कारण है कि हर वर्ष बरसात के साथ सड़कें उखड़ती हैं, पुलों में दरारें पड़ती हैं और करोड़ों रुपये की परियोजनाएं समय से पहले दम तोड़ देती हैं।

देश में सार्वजनिक निर्माण परियोजनाओं का बड़ा हिस्सा कमीशनखोरी और रिश्ततखोरी की भेंट चढ़ जाता है। ठेके हासिल करने से लेकर बिलों के भुगतान तक अनेक स्तरों पर भ्रष्टाचार व्याप्त है। जब परियोजना की लागत का बड़ा भाग अवैध लेन-देन में खर्च हो जाता है, तब निर्माण की गुणवत्ता पर सीधा प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। घटिया सामग्री का उपयोग, तकनीकी मानकों की अनदेखी और समय सीमा का दबाव मिलकर ऐसी संरचनाएं तैयार करते हैं जो पहली ही परीक्षा में असफल हो जाती हैं। विडंबना यह भी है कि प्रत्येक दुर्घटना के बाद जांच समितियां गठित होती हैं, रिपोर्टें तैयार होती हैं, मुआवजे घोषित होते हैं, लेकिन व्यवस्था में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं आता। दोषी अधिकारियों और ठेकेदारों के विरुद्ध मुकदमे वर्षों तक लंबित रहते हैं। जनता का आक्रोश धीरे-धीरे शांत हो जाता है और फिर कोई नई दुर्घटना उसी कहानी को दोहरा देती है। विकसित देशों में भी दुर्घटनाएं होती हैं, किंतु वहां प्रत्येक हादसे के बाद प्रणालीगत सुधार किए जाते हैं। भारत में सुधार की अपेक्षा लीपापोती अधिक दिखाई देती है।

अब समय आ गया है कि सार्वजनिक निर्माण कार्यों के लिए पूरी व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन किया जाए। प्रत्येक परियोजना के लिए स्वतंत्र थर्ड-पार्टी गुणवत्ता ऑडिट अनिवार्य किया जाए। निर्माण सामग्री की डिजिटल ट्रैकिंग, प्रत्येक चरण का तकनीकी सत्यापन तथा ड्रोन और आधुनिक सेंसर आधारित निरीक्षण को व्यवस्था का हिस्सा बनाया जाए। परियोजना पूरी होने के बाद केवल उद्घाटन नहीं, बल्कि निश्चित अवधि तक उसके प्रदर्शन का भी वैज्ञानिक मूल्यांकन किया जाए। सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता यह है कि दोषी अधिकारियों, इंजीनियरों और ठेकेदारों की व्यक्तिगत एवं आर्थिक जवाबदेही तय हो। यदि उनकी लापरवाही से जनहानि होती है या सार्वजनिक धन की बर्बादी होती है, तो केवल निलंबन नहीं, बल्कि सेवा से बर्खास्तगी, आर्थिक दंड और आपराधिक मुकदमे जैसी कठोर कार्रवाई होनी चाहिए। जब तक भ्रष्टाचार की कीमत चुकानी नहीं पड़ेगी, तब तक भ्रष्टाचार समाप्त नहीं होगा।

भारत आज विकसित राष्ट्र बनने का संकल्प लेकर आगे बढ़ रहा है। विश्वस्तरीय एक्सप्रेसवे, आर्थिक गलियारे, हाई-स्पीड रेल, आधुनिक हवाई अड्डे और स्मार्ट शहर तभी सार्थक होंगे, जब उनकी नींव ईमानदारी, गुणवत्ता और पारदर्शिता पर आधारित होगी। विकास का अर्थ केवल नई परियोजनाओं का उद्घाटन नहीं, बल्कि उनका वर्षों तक सुरक्षित और टिकाऊ बने रहना भी है। आज आवश्यकता केवल नई सड़कें और पुल बनाने की नहीं, बल्कि ऐसी व्यवस्था बनाने की है जिसमें कोई भी सड़क पहली बारिश में न धंसे, कोई पुल उद्घाटन से पहले न गिरे और कोई हवाई अड्डा यात्रियों के लिए खतरा न बने। भ्रष्टाचार की गहरी नींव पर विकास की मजबूत इमारत कभी खड़ी नहीं हो सकती। यदि भारत को वास्तव में विकसित राष्ट्र बनना है, तो विकास की चमक के साथ उसकी गुणवत्ता, पारदर्शिता और जवाबदेही को भी राष्ट्रीय प्राथमिकता बनाना होगा। तभी जनता का विश्वास बचेगा, सार्वजनिक धन सुरक्षित रहेगा और विकास का मार्ग सचमुच मजबूत एवं स्थायी बन सकेगा।

विनम्र श्रद्धांजलि

स्व. के.सी. मालू : राजस्थानी संस्कृति के ध्वजवाहक

संगीत, भाषा और संस्कृति जगत के लिए अपूरणीय क्षति

सांस्कृतिक संवाददाता द्वारा

कुछ व्यक्तित्व केवल अपने जीवनकाल तक

सीमित नहीं रहते, वे अपने समय की सांस्कृतिक चेतना बन जाते हैं। उनके जाने के बाद भी उनकी साधना समाज की स्मृतियों, संस्कारों और परंपराओं में जीवित रहती है।

राजस्थानी लोकसंगीत, भाषा, साहित्य और संस्कृति के ऐसे ही युगपुरुष थे के.सी. मालू। उनका निधन केवल एक व्यक्ति का निधन नहीं है, बल्कि

राजस्थान की सांस्कृतिक यात्रा के एक स्वर्णिम अध्याय का विराम है। उन्होंने अपने जीवन को जिस निष्ठा, समर्पण और तपस्वी भाव से राजस्थानी अस्मिता के संरक्षण में समर्पित किया, वह उन्हें सामान्य व्यक्तियों की श्रेणी से बहुत ऊपर स्थापित करता है। आज जब बाजारवाद और वैश्वीकरण की तेज आंधी में लोकसंस्कृतियां अपनी पहचान बचाने के लिए संघर्ष कर रही हैं, तब के. सी. मालू जैसे व्यक्तित्वों का महत्व और भी बढ़ जाता है। उन्होंने यह सिद्ध किया कि यदि संकल्प दृढ़ हो तो एक अकेला व्यक्ति भी पूरी सांस्कृतिक धरोहर को विलुप्त होने से बचा सकता है। उन्होंने राजस्थानी लोकधुनों एवं लोकगीतों को केवल संग्रहित नहीं किया, बल्कि उन्हें नई पीढ़ी की धड़कनों तक पहुंचाया। उन्होंने संस्कृति को संग्रहालय की वस्तु नहीं बनने दिया, बल्कि उसे जनजीवन की सांसों से जोड़ दिया। निश्चित ही वे लोकधुनों के सजग प्रहरी थे, संस्कृतिप्रेमी एवं कला-साधक थे।

संगीत उनके लिए केवल मनोरंजन नहीं था, बल्कि संस्कृति का प्राण था। उन्होंने हजारों लोकगीतों की पांडुलिपियां तैयार करवाईं, ध्वनिलिपियां बनवाईं, उनकी रिकॉर्डिंग करवाई और उन्हें सुरक्षित रखा। बिना किसी सरकारी सहायता के पांच हजार से अधिक लोकगीतों का संरक्षण अपने आप में विश्वस्तरीय सांस्कृतिक साधना है। यह कार्य किसी संस्थान के लिए भी कठिन माना जाता है, लेकिन उन्होंने इसे अपने जीवन का मिशन बना लिया। यही कारण है कि आज राजस्थान की अनेक लोकधुनें, विवाह गीत, मांड, पणिहारी, घूमर, चिरमी और असंख्य लोकगाथाएं सुरक्षित हैं। वीणा म्यूजिक की स्थापना केवल एक व्यावसायिक संस्था की स्थापना नहीं थी, बल्कि यह राजस्थान की आत्मा को स्वर देने का अभियान था। उस दौर में जब लोककलाकार



गुमनामी के अंधेरे में खो रहे थे, उन्होंने उन्हें मंच दिया, सम्मान दिया और पहचान दी। अनेक कलाकार, जिनकी प्रतिभा गांवों

तक सीमित थी, उनके प्रयासों से राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मंचों तक पहुंचे। उन्होंने सिद्ध कर दिया कि लोककला किसी क्षेत्र की सीमाओं में कैद नहीं होती, बल्कि वह पूरी मानवता की सांस्कृतिक धरोहर होती है। ऐसा प्रतीत होता है उनके जीवन की हर पात में संगीत की झंकार है। राजस्थानी संस्कृति, संगीत एवं लोकधुनों से जहां-जहां साक्षात्कार होगा, वहां-वहां के.सी. मालू के कदमों के निशान मिलेंगे। उनका मन एवं कर्म सृजनात्मक था।

के.सी. मालू की दृष्टि केवल संगीत तक सीमित नहीं थी। वे राजस्थानी भाषा के भी प्रखर प्रहरी थे। उनका मानना था कि भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं होती, बल्कि वह किसी समाज की आत्मा और उसकी सांस्कृतिक स्मृति होती है। राजस्थानी भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में स्थान दिलाने के लिए उन्होंने जो संघर्ष किया, वह उनके सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एवं अपनी माटी के प्रति समर्पण का प्रमाण है। उन्होंने देश और विदेश के अनेक मंचों पर राजस्थानी भाषा की गरिमा और उसकी समृद्ध साहित्यिक परंपरा को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया। उनके व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वे प्रसिद्धि के शिखर पर पहुंचकर भी विनम्र बने रहे। उनके भीतर कलाकार का संवेदनशील हृदय, साहित्यकार की दृष्टि और समाजसेवी की आत्मीयता एक साथ दिखाई देती थी। वे जानते थे कि संस्कृति केवल पुस्तकों या मंचों से जीवित नहीं रहती, बल्कि लोगों के जीवन में उतरने से जीवित रहती है। इसलिए उन्होंने लोकसंगीत को गांवों से निकालकर शहरों तक और भारत से निकालकर विश्वभर के राजस्थानी समाज तक पहुंचाया।

वर्ष 1987 में अकाल पीड़ितों की सहायता के लिए लता मंगेशकर नाइट का आयोजन कर एक करोड़ रुपये की सहायता राशि जुटाना उनके सामाजिक दायित्वबोध का अद्भुत उदाहरण है। यह बताता है कि उनके लिए संगीत केवल कला नहीं, बल्कि सेवा का माध्यम भी था। उन्होंने अपने संसाधनों और प्रतिष्ठा का उपयोग समाजहित के लिए किया। आज जब कला का बड़ा हिस्सा केवल व्यवसाय बनता जा रहा है, तब के.सी. मालू का जीवन यह संदेश देता है कि कला का सर्वोच्च उद्देश्य समाज को समृद्ध बनाना है। उनके द्वारा संकलित 221 राजस्थानी विवाह गीतों का विशाल संग्रह विश्व में अपनी तरह का अनूठा उदाहरण है। यह केवल गीतों का संग्रह नहीं, बल्कि राजस्थान की सामाजिक परंपराओं, पारिवारिक संस्कारों और सांस्कृतिक स्मृतियों का जीवंत दस्तावेज है। उन्होंने यह समझ लिया था कि यदि लोकगीत बचेंगे तो लोकजीवन भी बचेगा। इसलिए उन्होंने संगीत के माध्यम से संस्कृति की रक्षा का महान कार्य किया।

मेरा उनसे संबंध केवल एक प्रशंसक का नहीं था, बल्कि आत्मीयता का था। मेरे पूज्य पिताजी स्व. श्री रामस्वरूप जी गर्ग जब भी जयपुर जाते थे, तो के.सी. मालू जी से अवश्य मिलते थे। दोनों के बीच साहित्य, संस्कृति, जैन दर्शन और

समाज के विविध विषयों पर लंबी चर्चाएं होती थीं। उन चर्चाओं का उल्लेख मैं बचपन से सुनता आया हूँ। उन संवादों में केवल विचारों का आदान-प्रदान नहीं होता था, बल्कि संस्कृति के भविष्य की चिंता और समाज के प्रति उत्तरदायित्व का भाव भी दिखाई देता था। बाद में मुझे भी उनसे मिलने और उनके स्नेह का लाभ लेने का अवसर मिला। उनकी सहजता, आत्मीयता और विचारों की गहराई आज भी स्मृतियों में ताजा है। वे जब भी राजस्थान की संस्कृति की बात करते थे, उनके शब्दों में केवल जानकारी नहीं होती थी, बल्कि मातृभूमि के प्रति अगाध प्रेम झलकता था। वे मानते थे कि अपनी जड़ों से जुड़ा समाज ही भविष्य का निर्माण कर सकता है। शायद यही कारण था कि उन्होंने आधुनिक तकनीक को अपनाते हुए भी परंपरा को कभी नहीं छोड़ा। उन्होंने डिजिटल माध्यमों पर भी राजस्थानी संगीत को स्थापित किया, जिससे दुनिया के किसी भी कोने में रहने वाला राजस्थानी अपनी मिट्टी की सुगंध को महसूस कर सके।

आप एक सेतु बन सकते हैं खूबसूरत, जिन्दगी बांचने वाला एवं संस्कृति-संरक्षण करने वाला पुल। हम एक साथ मिलकर जीवन को संस्कृतियुक्त बना सकते हैं, जीवन में आने वाली बाधाओं को दूर कर सकते हैं, अंधेरों के बीच रोशनी बन सकते हैं। इसी सोच के साथ 'वीणा' के संस्थापक के. सी. मालू का जीवन हमें यह भी सिखाता है कि महानता पद, सत्ता या संपत्ति से नहीं आती, बल्कि उस विरासत से आती है जो व्यक्ति समाज को देकर जाता है। उन्होंने अपने पीछे न केवल हजारों गीतों का खजाना छोड़ा है, बल्कि असंख्य कलाकारों की मुस्कान, लाखों श्रोताओं की स्मृतियां और आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का एक अमूल्य स्रोत भी छोड़ा है। यही किसी भी जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि होती है। आज उनके निधन पर शोक व्यक्त करते हुए मन बार-बार यही कहता है कि कुछ लोग शरीर से विदा होते हैं, किंतु अपने कार्यों के कारण कभी विदा नहीं होते। के. सी. मालू भी ऐसे ही अमर व्यक्तित्व हैं। जब भी राजस्थान की धरती पर घूमर की थाप गूंजेगी, मांड की मधुर स्वर-लहरियां बहेगी, विवाह गीतों में लोकसंस्कृति का उल्लास झलकेगा, तब-तब उनकी साधना स्मरण की जाएगी। वे हर उस स्वर में जीवित रहेंगे, जिसमें राजस्थान की माटी की सुगंध होगी।

मालू का जीवन एक संदेश है कि संस्कृति का संरक्षण किसी सरकार का नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक सजग व्यक्ति का दायित्व है। यदि एक व्यक्ति संकल्प ले ले तो वह पूरी पीढ़ियों की सांस्कृतिक स्मृति को सुरक्षित रख सकता है। के.सी. मालू ने यही करके दिखाया। इसलिए उनका जाना केवल एक रिक्तता नहीं, बल्कि एक ऐसी जिम्मेदारी छोड़ गया है जिसे समाज को मिलकर निभाना होगा। ईश्वर से प्रार्थना है कि वे पुण्यात्मा के. सी. मालू को अपने श्रीचरणों में स्थान दें तथा उनके परिजनों, असंख्य शुभचिंतकों और समस्त कला-जगत को इस अपूरणीय क्षति को सहन करने की शक्ति प्रदान करें। उनके द्वारा प्रज्वलित संस्कृति, संगीत और भाषा का यह दीपक आने वाली पीढ़ियों को सदैव आलोकित करता रहेगा। यही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

सब चलता है



अक्षय शुक्ला

1997- दिल्ली उपहार सिनेमा, 59 मीतें। 2011- कोलकाता अस्पताल, 90 मरे। 2019- सूरत कोविंग सेंटर, 22 स्टूडेंट्स की मौत। 2024 में राजकोट गेमिंग जेन में 27 लोग मारे गए। 2025 में गोवा नाइट क्लब फायर, 25 की मौत। इनमें से एक हादसे के बाद भी अगर गंभीरता से एक्शन होता तो कितने लोगों को असमय काल के गाल में जाने से बचाया जा सकता था। लेकिन ऐसा नहीं हुआ और बीती 3 जून को दिल्ली के मालवीय नगर में अवैध रूप से बने होटल की आग में 21 जानें चली गईं, जिनमें एक पूरा परिवार ही खत्म हो गया। इतने बड़े हादसे से भी सबक सीख लिया होता तो लखनऊ के अलीगंज में 15 युवाओं का यूं भयावह अंत न होता। इन सब हादसों में वही सब कारण सामने आए जैसे बिना फायर एनओसी चलना, लेआउट प्लान का उल्लंघन कर अतिक्रमण और इमरजेंसी एग्जिट तक ब्लॉक कर देना। नियमों की ऐसी धज्जियां तब उड़ रही हैं, जब देश की सुप्रीम कोर्ट कई बार सख्त आदेश दे चुकी है।

मालवीय नगर अग्निकांड के बाद दिल्ली, यूपी की सरकारों ने ऐसे तमाम होटलों और कमर्शल एक्टिविटी पर रोक लगाने के आदेश दिए, जो नियमों का उल्लंघन कर चलती मिलें। चंद रोज़ का दिखावा हुआ, फिर सब शांत और अब लखनऊ की घटना के बाद सीएम एक बार फिर सारे अवैध कारोबारों को सील करने का वही आदेश दोहरा रहे हैं, जो बीस दिन पहले दिया था। कायदे से तो जब आपने चंद रोज़ पहले ही फरमान जारी किया है तो उसे दोबारा देने की नौबत ही नहीं आनी चाहिए थी, बल्कि आपको यह पूछना चाहिए था कि उस दिन के आदेश पर अब तक क्या एक्शन हुआ? अलीगंज में आवासीय परिसर की मंजूरी थी, वहां तीन मंजिला होटल चलती रही, जिम्मेदार आंखों पर पट्टी बांधे बैठे रहे।

अब जब इतनी जानें चली गईं, तब इमारत के मालिक को गिरफ्तार कर और चार अफसरों को सरपेंड कर खानापूत कर ली। ऐसे ही, मालवीय नगर में होटल मालिक को गिरफ्तार कर काम खत्म समझ लिया, पर उन अधिकारियों का क्या, जिन पर फायर एनओसी चेक करने की जिम्मेदारी थी। 6 कमरों के लिए पास हुआ यह ब्रेड एंड ब्रेकफास्ट होटल 25 कमरों तक कैसे पहुंच गया? किसकी अनुमति से यह हुआ, उनकी सजा निलंबन या तबादला ही क्यों, लाक्षापुहों के जिम्मेदारों पर मर्डर का मुकदमा क्यों न चले?

होटल मालिक का यह बयान सिस्टम के गाल पर जोरदार तमाचा है कि नियमों की परवाह इसलिए नहीं की क्योंकि एक करीबी ने उसे बताया था, दिल्ली में सब चलता है। देश की राजधानी में यह बेखोफी आ जाए तो समझ लें सिस्टम में कितनी जंग लग चुकी है।

तीसरा विश्वयुद्ध रोकने की चुनौती!

अमेरिका-ईरान संघर्ष में बढ़ता तनाव चरम पर



विश्वशांति की चिंताओं के बीच ताजा हालात पर 'नवयुग' की विशेष टिप्पणी

अमेरिका और ईरान के बीच लंबे तनाव के बाद बड़ी कठिनाई से बना संघर्ष विराम अपनी निर्धारित अवधि पूरी करने से पहले ही टूटने की कगार पर पहुंच गया है या कहिए ताजा हालात ने पहुंचा दिया है। ईरान द्वारा अमेरिकी सैन्य ठिकानों पर किए गए ताजा हमलों और उसके जवाब में अमेरिका की भीषण बमबारी ने एक बार फिर पूरी दुनिया को युद्ध की आशंकाओं के बीच खड़ा कर दिया है। यह केवल दो देशों के बीच का सैन्य संघर्ष नहीं है, बल्कि वैश्विक शांति, आर्थिक स्थिरता और मानवीय मूल्यों के लिए गंभीर चुनौती है। जिस समय विश्व को महामारी, आर्थिक मंदी, जलवायु परिवर्तन और ऊर्जा संकट जैसी समस्याओं से मिलकर लड़ना चाहिए, उस समय महाशक्तियों का युद्धोन्माद पूरी मानवता को पीछे धकेलने का कार्य कर रहा है। होर्मुज जलडमरूमध्य को लेकर उत्पन्न विवाद ने इस संघर्ष को और भी विस्फोटक बना दिया है। विश्व के लगभग 20 प्रतिशत कच्चे तेल की आपूर्ति इसी समुद्री मार्ग से होती है। यदि यह मार्ग बाधित होता है तो केवल तेल की कीमतें ही नहीं बढ़ेंगी, बल्कि पूरी वैश्विक अर्थव्यवस्था पर इसका व्यापक दुष्प्रभाव पड़ेगा। महंगाई बढ़ेगी, उत्पादन लागत में वृद्धि होगी, आपूर्ति शृंखलाएं टूटेंगी और विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था सबसे अधिक प्रभावित होगी। युद्ध की आग कभी सीमाओं में नहीं रहती, उसकी तपिश अंततः पूरी दुनिया को झुलसाती है।

इस संघर्ष का सबसे दुखद पक्ष यह है कि इसमें निर्दोष नागरिकों, नाविकों और आम जनजीवन को सबसे अधिक कीमत चुकानी पड़ती है। हाल के घटनाक्रम में भारतीय नाविकों के प्रभावित होने और भारत के सहयोग से विकसित रणनीतिक महत्व वाले चाबहार बंदरगाह परियोजना को नुकसान पहुंचने से यह स्पष्ट हो गया है कि युद्ध किसी एक देश तक सीमित नहीं रहता। अंतरराष्ट्रीय व्यापार, ऊर्जा सुरक्षा और वैश्विक विश्वास-तीनों पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अमेरिका स्वयं को लोकतंत्र और विश्व व्यवस्था का संरक्षक बताता है, लेकिन उसकी विदेश नीति लंबे समय से प्रतिबंधों, सैन्य दबाव और शक्ति प्रदर्शन पर आधारित रही है। किसी भी राष्ट्र को झुकाने के

लिए आर्थिक प्रतिबंध, सैन्य हमले और राजनीतिक दबाव स्थायी समाधान नहीं हो सकते। महाशक्ति होने का अर्थ केवल सैन्य सामर्थ्य नहीं, बल्कि संयम, दूरदृष्टि और विश्व समुदाय के प्रति नैतिक उत्तरदायित्व भी है। यदि शक्ति विवेक से संचालित न हो तो वही शक्ति विनाश का कारण बन जाती है।

दूसरी ओर ईरान को भी यह समझना होगा कि अंतरराष्ट्रीय समुद्री मार्गों को अपने रणनीतिक हितों के लिए बंधक बनाना न तो अंतरराष्ट्रीय कानून के अनुरूप है और न ही वैश्विक विश्वास के अनुरूप। किसी भी देश की सुरक्षा तब तक स्थायी नहीं हो सकती जब तक वह पड़ोसी देशों और विश्व समुदाय के साथ सहयोग, विश्वास और पारदर्शिता का वातावरण निर्मित न करे। भय और प्रतिशोध पर आधारित सुरक्षा व्यवस्था अंततः स्वयं को ही असुरक्षित बना देती है। राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की कार्यशैली ने इस पूरे संकट को और भी अनिश्चित बना दिया है। एक ओर वे कठोर सैन्य कार्रवाई करते हैं, दूसरी ओर वार्ता और समझौते की बातें करते हैं। इस प्रकार के विरोधाभासी संदेश न केवल कूटनीतिक विश्वास को कमजोर करते हैं, बल्कि अंतरराष्ट्रीय बाजारों में भी अस्थिरता पैदा करते हैं। महाशक्तियों के नेताओं के प्रत्येक वक्तव्य का प्रभाव केवल उनके देशों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि विश्व की अर्थव्यवस्था, निवेश, ऊर्जा बाजार और करोड़ों लोगों के जीवन पर पड़ता है। इसलिए नेतृत्व में धैर्य, स्थिरता और विश्वसनीयता अत्यंत आवश्यक है।

इतिहास गवाह है कि युद्धों ने कभी स्थायी समाधान नहीं दिया। प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्ध से लेकर इराक, अफगानिस्तान, लीबिया और सीरिया तक, हर युद्ध ने नई समस्याएं ही पैदा की हैं। लाखों लोगों की जान गई, करोड़ों लोग विस्थापित हुए, अंततः समाधान बातचीत की मेज पर ही खोजे गए। यदि अंत में संवाद ही करना है, तो शुरुआत भी संवाद से ही क्यों नहीं हो सकती? यही प्रश्न आज पूरी मानवता के सामने खड़ा है। भारत ने सदैव विश्व को शांति, सह-अस्तित्व और अहिंसा का मार्ग दिखाया है। गौतम बुद्ध, भगवान महावीर और महात्मा गांधी की भूमि ने यह सिखाया कि वास्तविक विजय शत्रु को पराजित करने में नहीं, बल्कि शत्रुता को समाप्त करने में है। भारत की विदेश नीति भी

‘वसुधैव कुटुम्बकम्’ और ‘विश्वबंधुत्व’ के आदर्शों पर आधारित रही है। भारत ने हमेशा संवाद, कूटनीति और शांतिपूर्ण समाधान का समर्थन किया है। यही कारण है कि भारत आज विश्वसनीय मध्यस्थ, संतुलित शक्ति और जिम्मेदार वैश्विक भागीदार के रूप में सम्मान प्राप्त कर रहा है।

वर्तमान संकट में भारत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो सकती है। भारत के अमेरिका, ईरान और खाड़ी देशों के साथ संतुलित संबंध हैं। भारत यदि संयुक्त राष्ट्र और अन्य अंतरराष्ट्रीय मंचों के माध्यम से सक्रिय शांति पहल करे, तो तनाव कम करने में उसकी भूमिका प्रभावी सिद्ध हो सकती है। साथ ही भारत को अपनी ऊर्जा सुरक्षा, समुद्री व्यापार और विदेशों में कार्यरत भारतीय नागरिकों की सुरक्षा के लिए भी दूरदर्शी रणनीति अपनानी होगी। आज आवश्यकता किसी एक पक्ष की विजय की नहीं, बल्कि मानवता की विजय की है। हथियारों की होड़ से न तो समृद्धि आती है और न ही सम्मान। वास्तविक शक्ति मिसाइलों, बमों और युद्धपोतों में नहीं, बल्कि विश्वास, सहयोग और संवाद में निहित होती है। युद्ध किसी भी समस्या का समाधान नहीं है, वह केवल नई समस्याओं को जन्म देता है। अहिंसा कायरता नहीं, बल्कि आत्मबल, धैर्य और दूरदर्शिता का सर्वोच्च स्वरूप है।

विश्व समुदाय को अब यह स्पष्ट संदेश देना होगा कि किसी भी देश की मनमानी, सामरिक अहंकार और युद्धोन्माद को स्वीकार नहीं किया जा सकता। संयुक्त राष्ट्र सहित वैश्विक संस्थाओं को अधिक प्रभावी, निष्पक्ष और सक्रिय भूमिका निभानी होगी।

यदि आज भी दुनिया ने युद्ध की राजनीति पर अंकुश नहीं लगाया, तो भविष्य की पीढ़ियां हमें क्षमा नहीं करेंगी। आज पूरी दुनिया की प्रार्थना यही है कि अमेरिका को शक्ति के साथ सद्बुद्धि मिले, ईरान को संयम और विवेक का मार्ग मिले तथा दोनों राष्ट्र हथियारों की भाषा छोड़कर संवाद की संस्कृति अपनाएं। शांति ही विकास का आधार है, संवाद ही स्थायी समाधान का मार्ग है और अहिंसा ही मानव सभ्यता का सबसे बड़ा अस्त्र है। यही समय की पुकार है, यही मानवता की अपेक्षा है और यही भविष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता भी।

‘महावीर से महाप्रज्ञ’ कार्यक्रम में गूँजा अहिंसा, प्रेक्षाध्यान और मानवता संदेश

आचार्य महाप्रज्ञ का प्रेक्षाध्यान का दर्शन: विश्व की सबसे बड़ी आवश्यकता: मुनिश्री जयकुमार



नई दिल्ली संवाददाता द्वारा

नई दिल्ली। आचार्य श्री महाप्रज्ञ के 107वें जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में 14 जुलाई को महावीर से महाप्रज्ञ विषय पर एक भव्य आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन दक्षिण दिल्ली स्थित पीएचडी चैंबर ऑफ कॉमर्स में किया गया। जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा, दिल्ली एवं आचार्य श्री महाश्रमण प्रवास व्यवस्था समिति, दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित इस कार्यक्रम ने भगवान महावीर के अहिंसा एवं आत्मसंयम के संदेश तथा आचार्य महाप्रज्ञ के प्रेक्षाध्यान, जीवन-विज्ञान और मानव एकता के दर्शन को जन-जन तक पहुंचाने का सशक्त प्रयास किया।

आचार्य श्री महाश्रमण जी के सुशिष्य मुनिश्री जयकुमार जी (ठाणा-3) ने अपने प्रेरक उद्बोधन में कहा कि भगवान महावीर का अहिंसा का संदेश और आचार्य महाप्रज्ञ का प्रेक्षाध्यान का विज्ञान आज की अशांत दुनिया के लिए अमृत के समान है। उन्होंने कहा कि मनुष्य यदि आत्मानुशासन, ध्यान और नैतिक मूल्यों को जीवन में उतार ले तो परिवार, समाज और राष्ट्र-तीनों में शांति एवं सद्भाव का वातावरण निर्मित हो सकता है। कार्यक्रम का शुभारंभ जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा-दिल्ली के सांस्कृतिक प्रभारी श्री जय सिंह दुगड़, श्री ललित श्यामसुखा एवं साथियों द्वारा आचार्य महाप्रज्ञ को समर्पित प्रेरणादायी गीत प्रज्ञा, महाप्रज्ञ की प्रज्ञा की सामूहिक प्रस्तुति से हुआ। गीत ने पूरे सभागार को आध्यात्मिक भावनाओं से ओत-प्रोत कर दिया।

मुख्य अतिथि श्री कन्हैयालाल जैन पटवारी ने कहा कि आचार्य महाप्रज्ञ का जीवन-दर्शन संपूर्ण मानवता की अमूल्य धरोहर है। उन्होंने कहा कि महाप्रज्ञजी के विचार केवल पढ़ने के लिए नहीं, बल्कि जीवन में उतारने के लिए हैं और यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। सर्वोच्च न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अश्विनी उपाध्याय ने अपने मुख्य वक्तव्य में कहा कि जब तक समाज में नैतिकता, चरित्र और आध्यात्मिक चेतना का विकास नहीं होगा, तब तक सुशासन और सामाजिक समरसता का लक्ष्य अधूरा रहेगा। उन्होंने कहा कि आचार्य महाप्रज्ञ के जीवन-मूल्य नई पीढ़ी को संस्कारित एवं राष्ट्र को सशक्त बनाने की दिशा में अत्यंत उपयोगी हैं। समारोह में श्री तेजकरण सुराणा, श्री सुखराज सेठिया, श्री हेमंत पटवारी, श्री बजरंग बोथरा, श्री राजेश जैन, श्री बाबूलाल गोलछा, श्रीमती कविता बरडिया, श्री प्रदीप खटेर सहित अनेक गणमान्य व्यक्तियों की गरिमामयी उपस्थिति रही। कार्यक्रम का विशेष आकर्षण सुप्रसिद्ध कवि, लेखक, विचारक एवं गायक बाबा सत्यनारायण मोर्य की ओजस्वी प्रस्तुति रही, जिसमें उन्होंने भगवान महावीर और आचार्य महाप्रज्ञ के जीवन-दर्शन को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत कर श्रोताओं को भाव-विभोर कर दिया। कार्यक्रम का प्रभावी संचालन अंतरराष्ट्रीय कवि श्री राजेश चेतन ने किया। आयोजन की सफलता में जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा, दिल्ली के अध्यक्ष श्री बिमल कुमार बेंगानी, महामंत्री श्री प्रदीप संचेती, कार्यक्रम संयोजक श्री इंद्र बेंगानी तथा व्यवस्थाओं एवं समन्वय में श्री राजेश भंडारी की उल्लेखनीय भूमिका रही। आचार्य श्री महाश्रमण प्रवास व्यवस्था समिति-दिल्ली के महामंत्री श्री सुखराज सेठिया ने कहा कि यह आयोजन केवल जन्मोत्सव नहीं, बल्कि आचार्य महाप्रज्ञ के चिंतन, दर्शन, प्रेक्षाध्यान, अहिंसा, नैतिकता और मानव एकता के संदेश को समाज के प्रत्येक वर्ग तक पहुंचाने का सशक्त जन-जागरण अभियान है। मंगलपाठ एवं सामूहिक सद्भावना संदेश के साथ संपन्न हुए इस आयोजन ने उपस्थित जनसमूह को आध्यात्मिक चेतना, नैतिक जीवन, अहिंसा और मानवता के आदर्शों को अपने जीवन में अपनाने की प्रेरणा दी। यह समारोह भगवान महावीर से आचार्य महाप्रज्ञ तक प्रवाहित आध्यात्मिक परंपरा और मानवीय मूल्यों का एक प्रेरक उत्सव बन गया। कार्यक्रम में दिल्ली-एनसीआर सहित विभिन्न क्षेत्रों से बड़ी संख्या में श्रद्धालुओं, शिक्षाविदों, उद्योगपतियों, समाजसेवियों, युवाओं एवं महिलाओं की उत्साहपूर्ण सहभागिता रही।

स्पाई यूनिवर्स फिल्म: अल्फा

कमजोर कहानी को आलिया भट्ट का सहारा

फिल्म संवाददाता द्वारा

आलिया भट्ट इस फिल्म की सबसे बड़ी ताकत हैं। उनके भीतर का अभिनेता लगातार संघर्ष करता दिखाई देता है। उनका शरीर भले पारंपरिक एक्शन स्टार जैसा न हो, लेकिन उनकी आंखों में अपने किरदार के प्रति एक अडिग विश्वास दिखाई देता है। उन्होंने अपनी सीमाओं को अभिनय और तैयारी से ढंकने की पूरी कोशिश की है। कई एक्शन दृश्यों में वह प्रभावशाली भी लगती हैं।

सिनेमा में नायक पैदा नहीं होते, गढ़े जाते हैं। लेकिन नायिका? उसे आज भी अक्सर किसी नायक की छाया में खड़ा करके ही महान घोषित किया जाता है।

यशराज स्पाई यूनिवर्स की नई पेशकश 'अल्फा' देखते हुए यही विचार बार-बार मन में आता रहा। यह फिल्म उस दौर में आई है जब भारतीय सिनेमा महिलाओं को केंद्र में रख कर बड़े कैनवास की कहानियां कहने का साहस दिखा रहा है। ऐसे समय में 'अल्फा' से उम्मीद थी कि वह केवल एक महिला जासूस की कहानी नहीं होगी, बल्कि उस सिनेमाई मानसिकता को भी चुनौती देगी, जो वर्षों से यह मानती रही है कि दुनिया बचाने का अधिकार केवल पुरुषों के हिस्से आता है। अफसोस, फिल्म इस चुनौती को स्वीकार करने की बजाय उसी व्यवस्था का हिस्सा बन जाती है। फिल्म के निर्देशक हैं, शिव रवेल।

आलिया भट्ट इस फिल्म की सबसे बड़ी ताकत हैं। उनके भीतर का अभिनेता लगातार संघर्ष करता दिखाई देता है। उनका शरीर भले पारंपरिक एक्शन स्टार जैसा न हो, लेकिन उनकी आंखों में अपने किरदार के प्रति एक अडिग विश्वास दिखाई देता है। उन्होंने अपनी सीमाओं को अभिनय और तैयारी से ढंकने की पूरी कोशिश की है। कई एक्शन दृश्यों में वह प्रभावशाली भी लगती हैं।

शरवरी भी उनका अच्छा साथ देती हैं। दोनों अभिनेत्रियां मिलकर यह भरोसा दिलाती हैं कि भारतीय

सिनेमा में महिला-प्रधान एक्शन फिल्मों का भविष्य है। लेकिन भविष्य केवल कलाकारों के भरोसे नहीं बनता। उसके लिए वर्तमान में अच्छी पटकथा भी चाहिए। 'अल्फा' की सबसे बड़ी विडंबना यही है कि



इसकी कहानी हमें बार-बार अतीत में ले जाती है।

रॉ है। सीमा पार का दुश्मन है। देश के भीतर छिपा गद्दार है। एक सनकी वैज्ञानिक है। दुनिया को तबाह करने की योजना है। हेलीकॉप्टर हैं। विस्फोट हैं। लंबी बंदूकें हैं। राष्ट्रभक्ति के संवाद हैं। और अंत में वही पुराना सवाल, देश बचेगा या नहीं? इस पूरी यात्रा में केवल दर्शक की उत्सुकता नहीं बचती।

यशराज स्पाई यूनिवर्स की सबसे बड़ी समस्या शायद यही है कि उसने अपने ही बनाए फॉर्मूले को सफलता समझ लिया है। हर नई फिल्म पिछले सफल अध्यायों की प्रतिलिपि बनती जा रही है। पात्र बदल जाते हैं, लोकेशन बदल जाती हैं, चेहरे बदल जाते हैं, लेकिन कहानी नहीं बदलती।

इस फिल्म में चरापूजी की बारिश कुछ देर के लिए उम्मीद जगाती है। लगता है भारतीय स्पाई सिनेमा अपने भूगोल और संवेदना दोनों का विस्तार करेगा। लेकिन थोड़ी ही देर बाद कहानी फिर दिल्ली के सरकारी कमरों, राजस्थान के रेगिस्तान, लद्दाख की चोटियों और कश्मीर की वादियों में लौट आती है। दृश्य सुंदर हैं, लेकिन

उनमें कोई नया सिनेमाई अनुभव नहीं है।

बॉबी देओल अपने सीमित किरदार में प्रभाव छोड़ते हैं। अनिल कपूर हमेशा की तरह अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं। दिया मिर्ज़ा कुछ ही मिनटों में भावनात्मक गहराई पैदा कर देती हैं। विडंबना देखिए कि जिस फिल्म में भावनाओं का सबसे असरदार दृश्य एक छोटे किरदार के हिस्से आए, वहां मुख्य पात्रों की यात्रा कहीं न कहीं अधूरी रह गई है।

फिल्म का सबसे दिलचस्प और सबसे निराशाजनक हिस्सा ऋतिक रोशन का कैमियो है। कबीर एक मठ में प्रकट होते हैं। दर्शक सीट पर सीधा बैठ जाता है। कैमरा उनकी एंट्री को उसी श्रद्धा से फिल्माता है, जैसे किसी सुपरहीरो का आगमन हो। आगे जो एक्शन दृश्य आता

है, उसमें जॉन विक जैसी शैली की झलक साफ महसूस होती है। दृश्य रोमांचक है, लेकिन एक असहज प्रश्न भी छोड़ जाता है। अगर अल्फा सचमुच इस कहानी की नायिका है, तो चरम क्षण में भी उसे किसी स्थापित पुरुष नायक की उपस्थिति की आवश्यकता क्यों पड़ती है? यही वह क्षण है जहां फिल्म अपने ही विचार से विश्वासघात कर देती है। पूरी फिल्म में हमें बताया जाता है कि अल्फा असाधारण है। वह अकेली पूरी इमारत उड़ा सकती है। दुश्मनों की फौज का सामना कर सकती है। असंभव मिशन पूरा कर सकती है। लेकिन निर्णय? वे आज भी कोई और लेता है! आदेश? कोई और देता है। अंतिम वैधता? वह भी किसी और से मिलती है। यानी शक्ति उसकी है, लेकिन सत्ता अब भी किसी और की। यही भारतीय मुख्यधारा के सिनेमा की पुरानी बीमारी है। वह स्त्री को शक्तिशाली दिखाना चाहता है, लेकिन स्वतंत्र नहीं।

तकनीकी स्तर पर फिल्म किसी बड़े अंतरराष्ट्रीय प्रोजेक्ट से कम नहीं लगती। सिनेमैटोग्राफी प्रभावशाली है। एक्शन की कोरियोग्राफी कई जगह प्रभावित करती



है। बैकग्राउंड स्कोर ऊर्जा पैदा करता है। लेकिन तकनीक कभी कहानी का विकल्प नहीं बन सकती। सबसे महंगा कैमरा भी साधारण विचार को महान नहीं बना सकता।

फिल्म का गीत भी इसी समस्या का प्रतीक है। यूरोप की खूबसूरत लोकेशन, चमकदार फ्रेम और ग्लैमरस प्रस्तुति के बावजूद वह कहानी में कहीं फिट नहीं बैठता। वह सिर्फ इसलिए मौजूद लगता है क्योंकि हिंदी व्यावसायिक सिनेमा में गीत होना चाहिए। असल सवाल यह है कि क्या भारतीय स्पाई यूनिवर्स अब अपनी रचनात्मक सीमा तक पहुंच चुका है?

कभी 'पठान' की अतिरंजना मनोरंजन बन जाती थी क्योंकि फिल्म खुद को गंभीरता से नहीं लेती थी। 'अल्फा' चाहती है कि दर्शक उसके हर दृश्य पर विश्वास करें। लेकिन विश्वास तभी पैदा होता है जब कहानी ईमानदार हो। यहां कहानी बार-बार सुविधाजनक रास्ते चुनती है।

आलिया भट्ट और शरवरी ने अपनी तरफ से कोई कमी नहीं छोड़ी। दोनों इस फिल्म से बड़ी निकलती हैं। दुर्भाग्य यह है कि फिल्म उनके कद तक नहीं पहुंच पाती।

'अल्फा' यह याद दिलाती है कि प्रतिनिधित्व केवल पोस्टर पर महिला चेहरा लगा देने से नहीं आता। सशक्तीकरण का अर्थ केवल बंदूक थमा देना नहीं होता! सशक्तीकरण तब होता है जब कहानी भी उसी पात्र पर उतना ही भरोसा करे जितना प्रचार करता है। फिल्म समाप्त होने के बाद मन में एक अजीब-सी उदासी रह जाती है। इसलिए नहीं कि फिल्म बुरी है, बल्कि इसलिए कि यह उससे कहीं बेहतर हो सकती थी। कभी-कभी सबसे बड़ी असफलता खराब फिल्म बनाना नहीं होती। सबसे बड़ी असफलता होती है, एक बड़े विचार को औसत कहानी में बदल देना। अल्फा भारतीय स्पाई यूनिवर्स की पहली महिला योद्धा जरूर है, लेकिन वह अभी भी अपने ही ब्रह्मांड की पूरी तरह स्वतंत्र नायिका नहीं बन पाई।

चर्चित फिल्म : द ओडिसी

युद्ध और अशांति के दौर में शांति संदेश का प्रयास

क्रिस्टोफर नोलन का शानदार निर्देशन और तकनीकी सौंदर्य

फिल्म संवाददाता की विशेष रिपोर्ट

युद्ध वह विनाशशीला है, जिसमें जीतने वाला भी अक्सर हार ही जाता है। फिर चाहे कलिंग युद्ध में जीतकर हारे सम्राट अशोक हों या ग्रीक माइथॉलॉजी के सबसे चर्चित युद्ध ट्रॉय का नायक ओडिसियस। इथाका का राजा ओडिसियस वह बुद्धिमान और दिलेरी योद्धा था, जिसने अपनी सूझबूझ से ट्रॉय की अजेय दीवारों भेद दी थीं। वह लकड़ी के विशाल घोड़े के भीतर अपनी सेना को छिपाकर महल के भीतर जा पहुंचा और जीत की अमिट इबारत लिख दी। लेकिन 10 साल चली इस जंग में मिली जीत के बाद ओडिसियस को घर लौटना था। घर वापसी का यह सफर सिर्फ 10 साल लंबा ही नहीं है, बल्कि ओडिसियस के लिए एक अंदरूनी और बाहरी लड़ाई भी है। ग्रीक साहित्यकार होमर ने अपने महाकाव्य 'ओडिसी' में इसका विस्तृत वर्णन किया है। अब इसी कालजयी कहानी को हॉलीवुड के दिग्गज फिल्मकार क्रिस्टोफर नोलन बड़े पर्दे पर लेकर आए हैं। कहना गलत नहीं होगा कि ओडिसी जैसी अजर-अमर

कहानी को सिनेमैटिक न्याय दे पाना नोलन जैसे जीनियस के ही बस की बात है।

द ओडिसी की कहानी

फिल्म हजारों साल पहले ट्रॉय की लड़ाई खत्म होने के बाद इथाका के राजा ओडिसियस (मैट डेमन) के घर लौटने की है। अपने बचे हुए योद्धाओं के साथ घर वापसी के लिए निकले ओडिसियस की यह यात्रा इतनी लंबी और कठिन हो जाती है कि उसे इसमें 10 साल लग जाते हैं। इस सफर में उसकी मुठभेड़ साइक्लोप्स (एक आंख वाले विशाल दैत्य), अपने आकर्षक गीतों से पागल बना देने वाली राक्षसी सिरेंस, इंसानों को जानवर बना देने वाली जादूगरनी सर्सी आदि से होती है। ओडिसियस इन सबसे भी चतुराई और बहादुरी से लड़ता है और अपने लोगों को बचाने की भरपूर कोशिश करता है। लेकिन इसके बावजूद इस सफर में उसे अपने तमाम साथियों को खोना पड़ता है। ओडिसियस अपने इस सफर में एक लंबा अरसे तक कैलिप्सो (चालीज थेरॉन) नाम की देवी के द्वीप पर भी

फंसा रहता है, जो उसके प्यार में पड़ जाती है। इधर, इथाका में ओडिसियस की पत्नी पेनेलोप (एनी हैथवे) और बेटे टेलीमैकस (टॉम हॉलैंड) को एक अलग तरह की लड़ाई से जूझना पड़ता है। ओडिसियस के 20 साल तक वापस न आने पर एंटीनोस (रॉबर्ट पैटिनसन) समेत कई सूटर्स, पेनेलोप पर उनके साथ दूसरा विवाह करने का दबाव डालते रहते हैं। ऐसे में, इन सबके सफर और संघर्ष की परिणति क्या होती है, यह जानने के लिए आपको यह भव्य फिल्म देखनी चाहिए।

क्रिस्टोफर नोलन जिस तरह का जादू पर्दे पर रचने के लिए जाने जाते हैं, द ओडिसी में भी उन्होंने वही कारनामा दिखाया है। खास बात यह है कि मूल कहानी से वफादार रहने के बावजूद वह उसे ज्यादा समकालीन, व्यापक और गहरे दृष्टिकोण के साथ पेश करते हैं। फिर चाहे देवताओं को सीधे-सीधे दिखाने की बजाय तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं का सांकेतिक इस्तेमाल हो, या साइक्लोप्स और सर्सी जैसे दैत्य और जादूगरनी को इंसानियत बख्शना।

जीतकर भी सब खो देने वाले ओडिसियस का पश्चाताप, दुनियाभर में छिड़ी जंग के इस दौर में हम सभी को उठकर अपने चुनावों के बारे में सोचने पर मजबूर करता है। यह ऐसा पहलू है, जो नोलन की इस फिल्म का दर्जा कहीं अधिक बढ़ा कर देता है।

तकनीकी तौर पर द ओडिसी का कोई तोड़ नहीं है। यह पूरी तरह 70mm IMAX में शूट हुई है, जो एक शानदार विजुअल एक्सपीरिएंस देती है। फिल्म नॉन-लिनियर तरीके

से आगे बढ़ती है, जिससे दर्शक लगातार कहानी के साथ बंधे रहते हैं। उस पर होयटे वैन होयटेमा की सिनेमैटोग्राफी और लुडविग गोरानसन का बैकग्राउंड स्कोर टकटकी लगाए स्क्रीन की ओर देखने को मजबूर करता है।

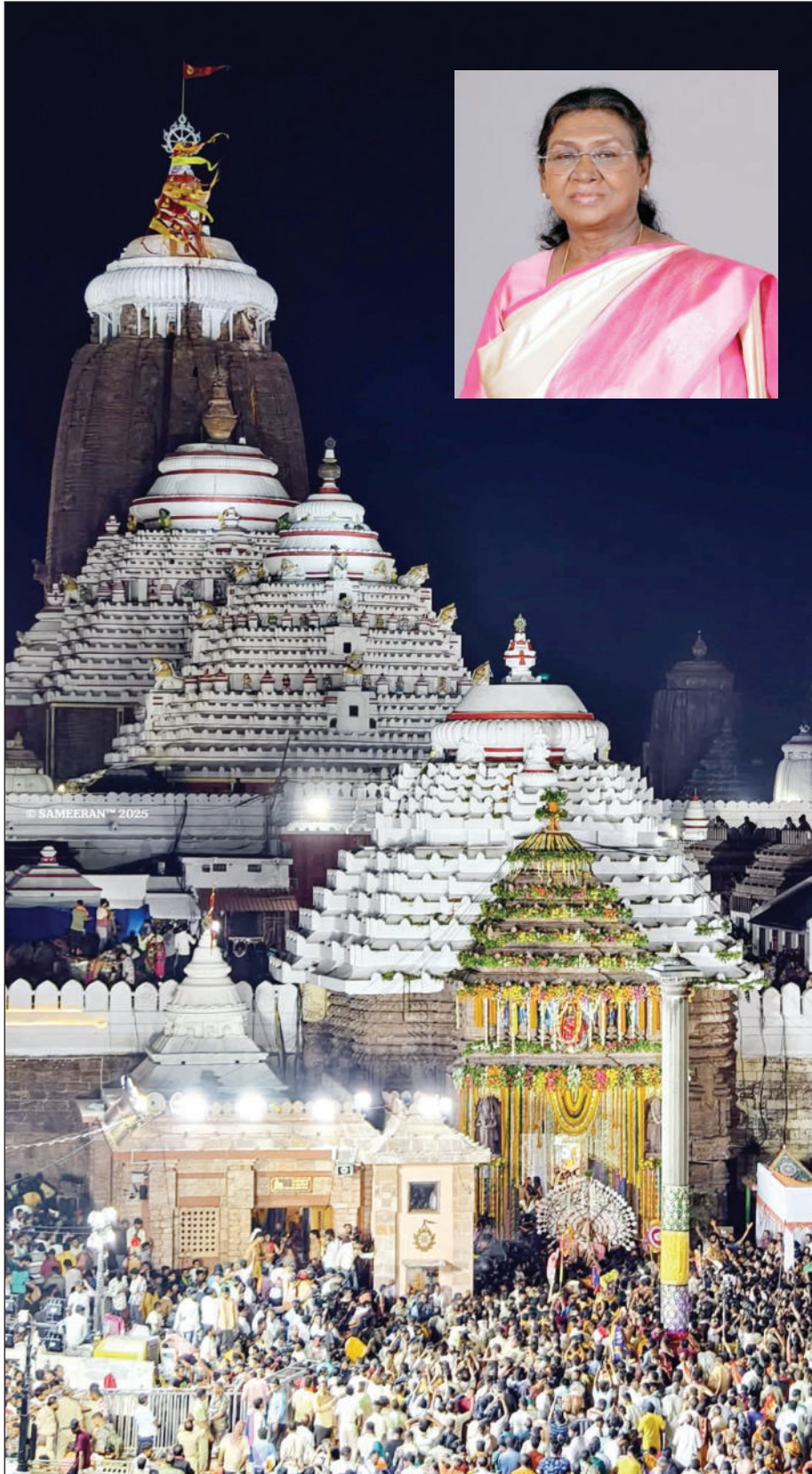
फिल्म की इकलौती कमजोर कड़ी टेलीमैकस का ट्रैक है, जो ज्यादा प्रभाव नहीं छोड़ता। वहीं, नोलन की दूसरी फिल्मों की तरह इसे समझने के लिए भी ओडिसी की कहानी पढ़कर जाएं तो बेहतर होगा, वरना ऐतिहासिक तथ्यों की जटिलता समझने में मुश्किल हो सकती है। फिल्म की लंबाई थोड़ी ज्यादा लग सकती है, लेकिन सीता स्वयंवर की याद दिलाता लाजवाब क्लाइमैक्स इस कमी को ढक देता है।

एक्टिंग की बात करें, तो ओडिसियस के रूप में ऑस्कर विजेता मैट डेमन ने एक और अवॉर्ड विनिंग परफॉर्मेंस दी है। ओडिसियस के मन की उलझनों, दुःखों और पश्चाताप को उन्होंने पर्दे पर जबरदस्त तरीके से उकेरा है। उनकी पत्नी पेनेलोप के रूप में एनी हैथवे की अदाकारी भी उनके किरदार की तरह ही महारानी जैसी लगी है।

जबकि, टेलीमैकस के रूप में टॉम हॉलैंड ठीक-ठाक हैं। सहयोगी भूमिका में देवी एथेना के रोल में जेंडया बिना एक शब्द बोले भी प्रभाव छोड़ती हैं, तो रॉबर्ट पैटिनसन और चार्लीज थेरॉन ने अपनी भूमिकाओं को जानदार बनाया है।

कुल मिलाकर, द ओडिसी वो फिल्म है, जो सिनेमाघर से निकलने के बाद भी घंटों तक आपके साथ रहती है।

महाप्रभु जगत के नाथ हैं: जगन्नाथ रथयात्रा पर विशेष मेरे जीवन के उत्थान-पतन के नियंता हैं महाप्रभु



द्रोपदी मुर्मू, राष्ट्रपति

बचपन से मुझे श्रीजगन्नाथ जी की अनेक प्रार्थनाएं और भजन याद हैं। स्कूल और कॉलेज में पढ़ते समय मैं गीत गाया करती थी। जगन्नाथ जी का भजन गाकर मैं खुश होती थी। महाप्रभु को अपने निकट पाती थी। अब गीत नहीं गाती, किंतु सांझ-सबेरे महाप्रभु का स्मरण करके उनके भजन गुनगुना

लेती हूँ। मुझे लगता है कि महाप्रभु हर वक्त मेरे आस-पास ही रहते हैं। विपदा-आपदा में मेरी मदद करते हैं। भक्तकवि मधुसूदन राव का गीत आज भी मैं मन ही मन गाती हूँ:

मेरे पास दिन-रात रहते हैं महाप्रभु परमेश्वर, यह बात याद कर हृदय में पूजुंगा उन्हें निरंतर। मैं कुछ समझने-बुझने की उम्र में पहुंचने तक जगन्नाथ जी को जानने लगी थी। हमारे घर में अकसर उनकी चर्चा होती थी। गांव के हर टोले में उनकी

महिमा का बखान होता था। जब मैं गांव के स्कूल में पढ़ती थी, भक्त सालबेग की आह नीड़ो शोड़ो प्रार्थना गाई जाती थी। स्कूल के शिक्षक जगन्नाथ जी के बारे में तरह-तरह की बातें कहा करते थे। पुरी में बड़ा मंदिर है, इतना बड़ा मंदिर और कहीं नहीं है! मंदिर में श्रीजगन्नाथ जी अपनी बहन सुभद्रा और बड़े भाई बलभद्र के साथ पूजे जाते हैं।

जगन्नाथ जी का रंग काला है, उनकी आंखें गोल-गोल हैं। सुभद्रा जी का रंग पीला है, बलभद्र हैं चांदनी फूल की तरह सफेद। वह छवि एक बार देख लेने के बाद फिर भुलाए नहीं भूलती। सर यह भी कहते थे, जगन्नाथ हैं 'महाप्रभु', उनका प्रसाद 'महाप्रसाद' है, उनका मंदिर 'बड़ा मंदिर' है, उनका पथ 'विशाल पथ' ('बोड़ो दांडो') है और उनका समुद्र 'महोदधि' है।

मयूरभंज के उपरबेड़ा गांव से पुरुषोत्तम क्षेत्र पुरी की दूरी बहुत थी! भला देखने का अवसर मुझे कहां मिलता। किंतु मैं भुवनेश्वर गई और मैंने यूनिट-2 के गर्ल्स हाईस्कूल में नाम लिखवाया। होस्टल में रहने लगी। उसके बाद मैंने पुरी, भुवनेश्वर और कोणार्क देखा। पहली बार जगन्नाथ दर्शन की स्मृति मेरे मन से मिटी नहीं है।

बहुत बड़ा मंदिर, बड़े-बड़े देवता! भला ये सब भुलाए जा सकते हैं? क्या भुलाई जा सकती है उनकी रथयात्रा? बारह महीने में तेरह पर्व-त्योहार मनाए जाते हैं श्रीक्षेत्र में, लेकिन रथयात्रा की छटा तो निराली होती है। पूरे वर्ष भक्तगण यहां आकर महाप्रभु का दर्शन करते हैं मंदिर के अंदर जाकर।

किंतु वर्ष में एक बार महाप्रभु अपने भव्य मंदिर से बाहर विशाल पथ ('बोड़ो दांडो') पर आते हैं। भक्तों को दर्शन देते हैं। तीन रथ पर तीन ठाकुर बैठकर चक्रराज सुदर्शन के साथ गुंडिचा मंदिर की ओर यात्रा करते हैं। वहां सात दिनों तक रहकर वापस लौट आते हैं। महाप्रभु का यह महापर्व अतुलनीय है।

बचपन से मैं जगन्नाथ जी की भक्त हूँ। वे सर्वदा मेरे परम आराध्य हैं। मेरे जीवन के उत्थान और पतन के वे नियंता हैं। मेरे दुख-सुख के कर्ता-धर्ता हैं। जीवन में मैंने बहुत कष्ट भी सहे हैं। उन सब दारुण दुखों से उबारा है मुझे महाबाहु ने। मैं उनकी बेटी जो हूँ!

राष्ट्रपति पद के लिए मुझे उम्मीदवार बनाने की घोषणा होते ही मैंने महाप्रभु का स्मरण किया। इतनी ऊंचाई पर मुझे ले जा रहे हो प्रभु, पग-पग पर मुझे सहारा देना, सदा मेरे पास रहना- यह मेरी प्रार्थना थी। उन्होंने मेरी प्रार्थना सुनी, सुन भी रहे हैं। राष्ट्रपति पद की उम्मीदवार के रूप में दिल्ली में रहने के दौरान रथयात्रा का महापर्व आया। परंतु पुरी जाना संभव नहीं था। रथयात्रा के दिन बड़े भोर में दिल्ली के हौजखास में बने जगन्नाथ मंदिर जाकर मैंने महाप्रभु के दर्शन किए।

आनंद से भर गया मन। उनका आशीष मुझ पर बरस गया। बड़े आत्मविश्वास से मैंने अपना नामांकन-पत्र दाखिल किया। अत्यंत उत्साह से चुनाव कैम्पेन में भाग लिया। 25 जुलाई 2022 को पार्लियामेंट के सेंट्रल हॉल में शपथ लेने जाते समय मैं जगन्नाथ जी से प्रार्थना करते-करते जा रही थी। उनके आशीर्वाद से मेरा शपथ-पाठ खूब अच्छी तरह सम्पन्न हुआ। राष्ट्रपति के रूप में मेरे प्रथम भाषण के समय मानो वे मेरे साथ ही थे।

पुरी जाकर महाप्रभु के दर्शन के लिए मेरा मन व्याकुल हो उठा। दिन बीतते चले गए, लेकिन मैं

पुरी नहीं जा सकी। मुझे लगा कि बिना उनके बुलावे के कोई कैसे उनके पास जा सकता है! मैंने मन ही मन उनसे कहा, मेरा कोई दोष हो तो क्षमा करो प्रभु, मुझे पुरी बुलाओ, दर्शन दो। वे भाव के ठाकुर हैं। मेरा भाव कैसे नहीं समझते? कुछ ही दिनों में पुरी जाने का कार्यक्रम तय हो गया। वह 10 नवंबर, 2022 का दिन था।

पुरी में अवतरण करने के बाद कार-केड चल पड़ा श्रीमंदिर की ओर। कार-केड पुरी के प्रशस्त पावन-पथ पर पहुंचते ही मेरे अंदर एक अपूर्व भावना का संचार हुआ। यह विशाल-पथ महाप्रभु जगन्नाथ का ही है। यहां क्या आवश्यकता है प्रोटोकॉल की? पुरी तो क्षेत्रराज के रूप में प्रसिद्ध है। महाप्रभु देवाधिदेव हैं। और अधिक कुछ सोचने से पहले मैंने गाड़ी रुकवाई।

मेरी गाड़ी रुकने पर पीछे आ रही सारी गाड़ियां रुक गईं। किसी के कुछ समझने से पहले मैंने पावन-पथ पर नंगे पैर चलना शुरू कर दिया। श्रीमंदिर लगभग दो किलोमीटर दूर था। मंदिर के नीलचक्र और पतित पावन-ध्वज को देखते हुए मैं आगे बढ़ती चली गई। पथ के दोनों किनारों पर खड़े बच्चों, महिलाओं, युवा-छात्रों और बुजुर्गों को नमस्कार भी करती जा रही थी।

मेरा ध्यान था जगन्नाथ जी के पास। श्रीमंदिर के सिंहद्वार के पास पहुंचते ही मैं स्थिर नहीं रह पाई। तब तक मैं खुद को भूल चुकी थी। पावन-पथ की धूल में साष्टांग लेटकर मैंने महाप्रभु को प्रणाम किया। उसके बाद मंदिर में प्रवेश। गर्भगृह में पहुंचकर चतुर्था मूर्तियों का दर्शन करते ही मैं आनंद से अभिभूत हो गई।

महाप्रभु जगत के नाथ हैं, अनाथों के नाथ हैं। जगत के लोगों का दुःख दूर करने के लिए वे सदा तत्पर रहते हैं। इसलिए उनकी गोल-गोल आंखों की पलकें कभी नहीं झपकतीं। उनके लिए छोटा-बड़ा कोई नहीं है। वे सबको समान दृष्टि से देखते हैं, समता के मंत्र से सबको अभिमंत्रित करते हैं।

उनकी करुणा पाकर ही मैंने समाज के हर वर्ग की सेवा में स्वयं को समर्पित किया है। करबद्ध होकर बोली, आपके आशीर्वाद से मेरा यह समर्पण भाव हमेशा बना रहे, हे महाबाहु। देश-दुनिया पर अपनी छत्र-छाया बनाए रखें, हे कृपानिधि!

यह कहते हुए मैं भक्तिभाव से विहल हो उठी!

रथयात्रा की छटा तो निराली और अविस्मरणीय है-

पहली बार जगन्नाथ दर्शन की स्मृति मेरे मन से मिटी नहीं है। बहुत बड़ा मंदिर, बड़े-बड़े देवता! भला ये सब भुलाए जा सकते हैं? क्या भुलाई जा सकती है उनकी रथयात्रा? बारह महीने में तेरह पर्व-त्योहार मनाए जाते हैं श्रीक्षेत्र में। लेकिन रथयात्रा की छटा तो निराली है।

अंतर्राष्ट्रीय प्लास्टिक बैग मुक्त दिवस

प्लास्टिक बैग के अजगरी खोल में पर्यावरण का महाविनाश



'नवयुग' की विशेष रिपोर्ट

पृथ्वी आज जिस सबसे बड़े पर्यावरणीय संकट से जूझ रही है, उसमें जलवायु परिवर्तन, जैव-विविधता का क्षरण और प्रदूषण के साथ-साथ प्लास्टिक प्रदूषण भी एक गंभीर वैश्विक चुनौती बन चुका है। कभी आधुनिक जीवन की सुविधा और विकास का प्रतीक मानी जाने वाली प्लास्टिक आज मानव सभ्यता के लिए अभिशाप सिद्ध हो रही है। विशेष रूप से सिंगल-यूज प्लास्टिक बैग ने हमारी जीवन-शैली को इतना जकड़ लिया है कि उससे मुक्ति के बिना न स्वच्छ पर्यावरण की कल्पना की जा सकती है और न ही स्वस्थ भविष्य की। इसी चिंता को लेकर प्रतिवर्ष 3 जुलाई को 'अंतर्राष्ट्रीय प्लास्टिक बैग मुक्त दिवस' मनाया जाता है। यह केवल एक औपचारिक दिवस नहीं, बल्कि पूरी दुनिया के लिए चेतावनी का दिन है कि यदि अब भी हमने अपनी आदतें नहीं बदलीं तो आने वाली पीढ़ियाँ हमें कभी क्षमा नहीं करेंगी।

आज विश्व में हर वर्ष लगभग 40 करोड़ टन प्लास्टिक का उत्पादन हो रहा है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के अनुसार इसका एक बड़ा हिस्सा केवल एक बार उपयोग के बाद कचरे में बदल जाता है। अनुमान है कि प्रतिवर्ष लगभग 1.1 से 1.4 करोड़ टन प्लास्टिक समुद्रों में पहुँच जाता है। यदि यही स्थिति बनी रही तो वर्ष 2050 तक समुद्रों में मछलियों से अधिक प्लास्टिक होने की आशंका व्यक्त की जा रही है। यह केवल एक आँकड़ा नहीं, बल्कि मानव सभ्यता के लिए भयावह भविष्य का संकेत है। सबसे अधिक चिंता का विषय यह है कि प्लास्टिक अब केवल धरती पर बिखरा कचरा नहीं रहा, बल्कि हमारे शरीर का भी हिस्सा बन चुका है। वैज्ञानिक शोध बताते हैं कि हवा, पानी, भोजन, नमक, दूध, शहद और यहाँ तक कि मानव रक्त, फेफड़ों तथा गर्भनाल में भी माइक्रोप्लास्टिक के कण पाए जा चुके हैं। एक सामान्य व्यक्ति प्रतिवर्ष हजारों सूक्ष्म प्लास्टिक कण भोजन, पेयजल और साँस के माध्यम से अपने शरीर में पहुँचा रहा है। यह स्थिति कैंसर, हार्मोनल असंतुलन, हृदय

रोग, प्रजनन संबंधी समस्याओं और प्रतिरक्षा तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव जैसी अनेक स्वास्थ्य चुनौतियों को जन्म दे रही है।

आधुनिक जीवनशैली में प्लास्टिक बैग हमारी दिनचर्या का अभिन्न हिस्सा बन गए हैं। सब्जी और किराने की खरीदारी से लेकर कपड़े, दवाइयाँ, भोजन, ऑनलाइन डिलीवरी, उपहार पैकिंग और घरेलू सामान तक लगभग हर कार्य में प्लास्टिक बैग का उपयोग हो रहा है। सुविधा और सस्तेपन के कारण इनका प्रयोग लगातार बढ़ता जा रहा है, जिससे हमारा जीवन मानो प्लास्टिक की गिरफ्त में आ गया है। एक बार उपयोग के बाद फेंके जाने वाले ये बैग पर्यावरण, जल स्रोतों, वन्यजीवों और मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा बन चुके हैं। इसलिए समय की मांग है कि हम कपड़े, जूट या कागज के थैलों को अपनाकर प्लास्टिक बैग से मुक्ति का संकल्प लें।

प्लास्टिक केवल मनुष्य के स्वास्थ्य का ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण पर्यावरण का भी शत्रु है। यह मिट्टी की उर्वरता को कम करता है, जल स्रोतों को प्रदूषित करता है, नालियों को जाम कर शहरी बाढ़ का कारण बनता है तथा पशु-पक्षियों और समुद्री जीवों की असमय मृत्यु का कारण बनता है। गायों के पेट से कई-कई किलो प्लास्टिक निकलने की घटनाएँ अब सामान्य हो गई हैं। समुद्री कछुए, डॉल्फिन, व्हेल और पक्षी प्लास्टिक को भोजन समझकर निगल लेते हैं और धीरे-धीरे मृत्यु का शिकार बन जाते हैं। इस प्रकार प्लास्टिक केवल पर्यावरण नहीं, बल्कि जीवन के पूरे जैविक तंत्र को नष्ट कर रहा है। विडम्बना यह है कि प्लास्टिक का सबसे बड़ा आकर्षण उसकी सुविधा है और यही सुविधा सबसे बड़ा संकट बन गई है। कुछ मिनटों के उपयोग के लिए बना प्लास्टिक बैग सैकड़ों वर्षों तक नष्ट नहीं होता। जिस वस्तु का उपयोग हम कुछ मिनट करते हैं, उसका दुष्प्रभाव कई पीढ़ियाँ भुगतती हैं। सुविधा की यह संस्कृति वास्तव में विनाश की संस्कृति बनती जा रही है।

भारत में भी प्लास्टिक प्रदूषण एक गंभीर चुनौती है। देश में प्रतिदिन हजारों टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न होता है, जिसका बड़ा भाग खुले में पड़ा रहता है या नदियों एवं समुद्र तक पहुँच जाता है। विभिन्न राज्यों ने सिंगल-यूज प्लास्टिक पर प्रतिबंध लगाया है, किन्तु प्रतिबंध का प्रभाव अभी दिखाई देगा जब समाज स्वयं इसके प्रति जागरूक होगा। केवल कानून से आदतें नहीं बदलतीं, उसके लिए सामाजिक चेतना आवश्यक होती है। पिछले कुछ वर्षों में भारत ने इस दिशा में अनेक सकारात्मक पहल की हैं। स्वच्छ भारत अभियान, सिंगल-यूज प्लास्टिक पर प्रतिबंध, विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व जैसी नीतियाँ महत्वपूर्ण कदम हैं। किंतु

इनकी सफलता अभी संभव है जब उद्योग, व्यापार, स्थानीय निकाय और आम नागरिक समान रूप से अपनी जिम्मेदारी निभाएं।

आज आवश्यकता केवल प्लास्टिक पर प्रतिबंध लगाने की नहीं, बल्कि जीवनशैली बदलने की है। जब तक हमारी खरीदारी की आदतें नहीं बदलेंगी, तब तक प्लास्टिक का उपयोग कम नहीं होगा। कपड़े या जूट का थैला साथ रखना, पुनः उपयोग योग्य बोतलों और डिब्बों का प्रयोग करना, अनावश्यक पैकेजिंग से बचना तथा स्थानीय स्तर पर पर्यावरण-अनुकूल उत्पादों को बढ़ावा देना-ये छोटे-छोटे कदम बड़े परिवर्तन का आधार बन सकते हैं। उद्योगों की भी बड़ी जिम्मेदारी है। उत्पादों की पैकेजिंग को पर्यावरण-अनुकूल बनाना, पुनर्चक्रण योग्य सामग्री का उपयोग करना और प्लास्टिक कचरे के संग्रह एवं पुनर्चक्रण की व्यवस्था सुनिश्चित करना समय की मांग है। केवल लाभ कमाने की मानसिकता से प्रकृति का संरक्षण संभव नहीं है। उद्योगों को 'ग्रीन बिजनेस' की दिशा में आगे बढ़ना होगा। शिक्षा संस्थानों की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि विद्यालयों और महाविद्यालयों में पर्यावरणीय जीवनशैली को व्यवहार का हिस्सा बनाया जाए, बच्चों को कपड़े के थैले उपयोग करने, प्लास्टिक-मुक्त परिसर बनाने और पर्यावरण संरक्षण की गतिविधियों से जोड़ा जाए, तो आने वाली पीढ़ियाँ अधिक संवेदनशील बनेंगी। पर्यावरण शिक्षा केवल पाठ्यपुस्तक का विषय नहीं, बल्कि जीवन का संस्कार बननी चाहिए।

आज पूरी दुनिया 'सर्कुलर इकोनॉमी' की ओर बढ़ रही है, जहाँ उत्पादों का पुनः उपयोग, पुनर्चक्रण और संसाधनों का न्यूनतम दोहन प्रमुख लक्ष्य है। भारत के लिए भी यही भविष्य का मार्ग है। यदि हम पारंपरिक भारतीय जीवन-पद्धति को देखें तो वहाँ कपड़े के झोले, मिट्टी के बर्तन, धातु के पात्र और प्राकृतिक संसाधनों का पुनः उपयोग सामान्य जीवन का हिस्सा थे। आधुनिकता के नाम पर हमने इन्हें छोड़ दिया और प्लास्टिक को अपना लिया। अब समय आ गया है कि आधुनिक विज्ञान और भारतीय परंपरा का समन्वय करते हुए टिकाऊ जीवनशैली अपनाई जाए। यह भी समझना होगा कि प्लास्टिक प्रदूषण केवल सरकार का विषय नहीं है।

यह प्रत्येक नागरिक की व्यक्तिगत जिम्मेदारी है। जिस दिन प्रत्येक व्यक्ति यह संकल्प ले ले कि वह प्लास्टिक बैग स्वीकार नहीं करेगा, उसी दिन इस समस्या का बड़ा समाधान प्रारम्भ हो जाएगा। बाजार वही वस्तु देता है जिसकी माँग होती है। यदि माँग समाप्त होगी तो आपूर्ति भी स्वतः कम हो जाएगी।

अंतर्राष्ट्रीय प्लास्टिक बैग मुक्त दिवस हमें केवल प्लास्टिक छोड़ने का संदेश नहीं देता, बल्कि यह प्रकृति के साथ हमारे रिश्ते को पुनर्जीवित करने का अवसर भी है। यह दिवस हमें याद दिलाता है कि पृथ्वी हमारे पूर्वजों की विरासत नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों की धरोहर है। यदि हम इसे सुरक्षित नहीं रख पाए तो विकास के सारे दावे अर्थहीन हो जाएँगे। महात्मा गांधी ने कहा था-“प्रकृति प्रत्येक मनुष्य की आवश्यकता पूरी कर सकती है, लेकिन किसी एक के लालच को नहीं।” आज यह कथन पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक है। प्लास्टिक का अनियंत्रित उपयोग हमारी आवश्यकताओं का नहीं, बल्कि उपभोक्तावादी लालच का परिणाम है।

आइए इस 3 जुलाई को केवल एक दिवस न मानें, बल्कि एक जन-आंदोलन का प्रारंभ करें। अपने घर, परिवार, विद्यालय, कार्यालय और बाजार से प्लास्टिक बैग को विदा करने का संकल्प लें। कपड़े का थैला हमारी पहचान बने, पर्यावरण हमारी प्राथमिकता बने और स्वच्छ पृथ्वी हमारी विरासत बने। जब प्लास्टिक का उपयोग घटेगा, तभी प्रकृति मुस्कुराएगी, जब प्रकृति मुस्कुराएगी, तभी मानवता का भविष्य सुरक्षित होगा। यही अंतर्राष्ट्रीय प्लास्टिक बैग मुक्त दिवस का वास्तविक संदेश है और यही हमारे समय का सबसे बड़ा पर्यावरणीय धर्म भी।

प्रसंगत:

सबसे बड़ी सेवा

आ बू उसमान हैरी नामक के एक संत थे। खुरासान में रहते थे। दूर-दूर तक उनका नाम था। लोग बड़ी श्रद्धा से उनके पास आते थे और उनके सात्विक जीवन और उपदेशों से लाभ उठाते थे। एक बार एक आदमी हज करने के विचार से घर से निकला। रास्ते में अबू उसमान हैरी की जगह पड़ती थी। उसने सोचा कि थोड़ा रुककर संत के दर्शन करता चलूँ। यह सोचकर वह उनके निवास पर पहुँचा और उनको सलाम किया, लेकिन संत ने उसके सलाम का जवाब नहीं दिया। इस बात से वह आदमी बड़ा दुःखी हुआ। वह कितनी श्रद्धा से उनके पास आया था और उन्होंने उसका अभिवादन भी स्वीकार नहीं किया। यह क्या हुआ? वह सोच में पड़ा हैरान हो रहा था कि संत ने कहा, “माँ को नाराज करके हज करना अच्छा नहीं।” अब उसे ध्यान आया कि उसकी माँ को उसकी जरूरत थी और वह उसे रोकती रही थी। जब वह नहीं माना तो वह नाराज भी हो उठी थी। उसकी नाराजगी की चिन्ता न करके वह घर से चल पड़ा था। संत की बात सुनकर वह उल्टे पैरों लौट गया और जबतक उसकी माँ जीवित रही, उनकी सेवा करता रहा। माँ का देहान्त हो जाने के बाद जब वह उन संत के पास पहुँचा, तो उन्होंने बड़े प्यार और आत्मीयता से उसका स्वागत किया और उसे अपना आशीर्वाद दिया।

जगन्नाथ महायात्रा- 16 जुलाई, 2026

आस्था, परम्परा, आध्यात्मिक चेतना का विराट उत्सव



ललित गर्ग

आषाढ़ शुक्ल द्वितीया से प्रारम्भ होकर दस दिनों तक चलने वाली भगवान श्री जगन्नाथ की रथयात्रा केवल एक धार्मिक आयोजन नहीं, बल्कि भारत की सांस्कृतिक चेतना, लोकआस्था, सामाजिक समरसता और आध्यात्मिक दर्शन का विराट उत्सव है। पुरी की यह महायात्रा हजारों वर्षों की परम्परा का जीवंत प्रतीक है, जिसमें भगवान स्वयं अपने भक्तों के बीच आते हैं। इसी कारण इसे 'महायात्रा' कहा जाता है। भारत के चार धामों में प्रतिष्ठित श्री जगन्नाथ धाम की यह यात्रा देश ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व के करोड़ों श्रद्धालुओं के आकर्षण का केन्द्र बनती है। वर्ष 2026 की रथयात्रा भी अपार श्रद्धा एवं उत्साह के साथ मनाई जा रही है, किन्तु इस बार इसके साथ एक नया विवाद भी जुड़ गया है। देश एवं विदेश के अनेक स्थानों पर इस्काँन द्वारा स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग तिथियों पर रथयात्रा आयोजित किए जाने पर कुछ धार्मिक एवं परम्परावादी संगठनों ने आपत्ति व्यक्त की है। उनका मत है कि जगन्नाथ रथयात्रा की तिथि वही होनी चाहिए जो पुरी श्रीमंदिर द्वारा निर्धारित होती है। दूसरी ओर इस्काँन का तर्क है कि विदेशों में स्थानीय प्रशासन की अनुमति, सार्वजनिक अवकाश, मौसम तथा अन्य व्यावहारिक कारणों से कभी-कभी तिथि में परिवर्तन आवश्यक हो जाता है। यह विवाद केवल तिथि का नहीं, बल्कि परम्परा और वैश्विक विस्तार के बीच संतुलन खोजने का विषय बन गया है।

वास्तव में यह समझना आवश्यक है कि पुरी की रथयात्रा और अन्य स्थानों पर आयोजित रथयात्राओं का स्वरूप अलग-अलग हो सकता है, किन्तु उनका मूल उद्देश्य भगवान जगन्नाथ की भक्ति, लोककल्याण और धर्मप्रचार ही है। यदि परम्परा का सम्मान बना रहे और श्रद्धा अक्षुण्ण रहे तो मतभेद संवाद के माध्यम से सुलझाए जा सकते हैं। धर्म का मूल स्वरूप जोड़ना है, विभाजन करना नहीं। पुरी का श्रीमंदिर भगवान जगन्नाथ का मुख्य धाम है। लगभग 800 वर्ष पुराने इस मंदिर में भगवान श्रीकृष्ण जगन्नाथ स्वरूप में अपने बड़े भाई बलभद्र एवं बहन सुभद्रा के साथ विराजमान हैं। प्रतिवर्ष केवल एक बार तीनों देव विग्रह अपने गर्भगृह से बाहर



निकलकर भक्तों को दर्शन देते हैं। यही इस यात्रा की सबसे बड़ी विशेषता है। सामान्य दिनों में जहां भगवान के दर्शन सीमित होते हैं, वहीं रथयात्रा में प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी भेदभाव के भगवान के साक्षात् दर्शन कर सकता है।

यात्रा की तैयारियां अक्षय तृतीया से प्रारम्भ हो जाती हैं। उसी दिन भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा के तीनों विशाल रथों का निर्माण आरम्भ होता है। प्रत्येक वर्ष नए रथ बनाए जाते हैं। यद्यपि उनका स्वरूप और आकार सदियों से समान रहता है, फिर भी प्रत्येक वर्ष नई लकड़ी, नई सज्जा और नवीन निर्माण किया जाता है। भगवान जगन्नाथ का रथ गरुडध्वज (कपिलध्वज), बलभद्र का तालध्वज तथा सुभद्रा का दर्पदलन अथवा पद्मध्वज कहलाता है। इन रथों के निर्माण की प्रक्रिया केवल शिल्पकला नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक साधना मानी जाती है। कारीगर विशेष धार्मिक नियमों का पालन करते हुए इन्हें बनाते हैं। यह परम्परा हमें यह संदेश देती है कि प्रत्येक वर्ष मनुष्य भी अपने भीतर की ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार और लोभ को त्यागकर स्वयं का नव-निर्माण करे।

रथयात्रा के पीछे अनेक पौराणिक कथाएं भी जुड़ी हैं। कहा जाता है कि एक बार सुभद्रा ने द्वारका नगर देखने की इच्छा व्यक्त की। तब भगवान श्रीकृष्ण और बलराम ने उन्हें अलग रथ पर बैठकर नगर भ्रमण कराया। उसी स्मृति में तीनों भाई-बहनों की संयुक्त रथयात्रा निकाली जाती है। एक अन्य कथा के अनुसार भगवान की अपूर्ण प्रतिमाओं का निर्माण स्वयं विश्वकर्मा ने किया था, जो आज भी जगन्नाथ संस्कृति की विशिष्ट पहचान है। इस महायात्रा का एक अत्यंत मार्मिक पक्ष यह भी है कि स्नान पूर्णिमा के बाद भगवान अस्वस्थ माने जाते हैं और लगभग पन्द्रह दिनों तक सार्वजनिक दर्शन नहीं देते। इसके पश्चात वे रथों पर आरूढ़ होकर अपनी मौसी के घर गुण्डिचा मंदिर जाते हैं। वहां नौ

दिनों तक विश्राम करते हैं और फिर बहुड़ा यात्रा के माध्यम से पुनः श्रीमंदिर लौटते हैं। लौटते समय भगवान का पोड़ा पीठा ग्रहण करना, पंचमी को देवी लक्ष्मी का रुष्ट होकर रथ का पहिया तोड़ना तथा बाद में भगवान द्वारा उन्हें मनाने की परम्परा भक्तिभाव एवं मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण है।

पुरी की रथयात्रा का एक अन्य अद्भुत दृश्य छेरा पहरा है। गजपति महाराज स्वयं स्वर्ण निर्मित झाडू से रथों के मार्ग की सफाई करते हैं। यह परम्परा संदेश देती है कि ईश्वर के समक्ष राजा और सामान्य व्यक्ति सभी समान हैं। सत्ता का सर्वोच्च पद भी सेवा से बड़ा नहीं हो सकता। रथयात्रा के समय जगन्नाथ मंदिर का महाप्रसाद भी विशेष आकर्षण का केन्द्र होता है। विश्व की सबसे बड़ी मंदिर रसोइयों में से एक इस रसोई में मिट्टी के पात्रों में प्रसाद बनाया जाता है। दाल, चावल, सब्जियाँ, मालपुआ, गजामूंग, लाई, नारियल तथा अनेक प्रकार के व्यंजन अत्यंत अल्प मूल्य पर श्रद्धालुओं को उपलब्ध कराए जाते हैं। यह प्रसाद केवल भोजन नहीं, बल्कि समानता और साझेदारी का प्रतीक है।

धार्मिक ग्रन्थों में रथयात्रा का अत्यंत महत्व बताया गया है। स्कन्द पुराण, ब्रह्म पुराण, पद्म पुराण तथा उत्कल खण्ड में भगवान जगन्नाथ की महिमा का विस्तार से वर्णन मिलता है। मान्यता है कि रथयात्रा के दर्शन एवं रथ को स्पर्श करने से अनेक जन्मों के पाप नष्ट होते हैं तथा रथ खींचने वाले को मोक्ष का अधिकारी माना गया है। यद्यपि इन मान्यताओं का आध्यात्मिक अर्थ यह है कि जो व्यक्ति अपने जीवन-रथ को धर्म, सेवा और सदाचार के मार्ग पर चलाता है, वही वास्तविक मुक्ति प्राप्त करता है। जगन्नाथ रथयात्रा की सबसे बड़ी विशेषता इसकी सामाजिक समरसता है। इस अवसर पर जाति, वर्ग, भाषा, क्षेत्र अथवा सम्प्रदाय का कोई भेद नहीं रहता। लाखों श्रद्धालु एक साथ रथ

की रस्सी खींचते हैं। यही वह क्षण होता है जब धर्म केवल पूजा-पद्धति न रहकर सामाजिक एकता का उत्सव बन जाता है।

आज यह यात्रा केवल पुरी तक सीमित नहीं रही। भारत के लगभग सभी प्रमुख नगरों सहित अमेरिका, ब्रिटेन, रूस, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, दक्षिण अफ्रीका और अनेक यूरोपीय देशों में भी जगन्नाथ रथयात्रा आयोजित होती है। विशेष रूप से इस्काँन ने इस परम्परा को वैश्विक पहचान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। करोड़ों विदेशी भक्तों ने इसी माध्यम से भगवान श्रीकृष्ण एवं जगन्नाथ संस्कृति को जाना है। इसलिए यदि कहीं तिथियों को लेकर व्यावहारिक परिवर्तन भी किए जाएं तो उनके पीछे धार्मिक अवमानना नहीं, बल्कि स्थानीय व्यवस्थाओं की विवशता भी हो सकती है। फिर भी यह अपेक्षा स्वाभाविक है कि जहाँ तक सम्भव हो, श्रीमंदिर की परम्परा और निर्धारित तिथि का सम्मान किया जाए, ताकि सम्पूर्ण विश्व में एकात्मता का संदेश और अधिक सुदृढ़ हो।

दार्शनिक दृष्टि से रथ मनुष्य के शरीर का, भगवान आत्मा का तथा रथ को खींचने वाली रस्सियाँ समाज और लोकशक्ति का प्रतीक हैं। आत्मा तभी सार्थक होती है जब समाज सहयोग करे और समाज तभी श्रेष्ठ बनता है जब उसके केन्द्र में ईश्वर, नैतिकता और आत्मशुद्धि का भाव हो। यही कारण है कि जगन्नाथ रथयात्रा केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि आत्मविशुद्धि, लोकमंगल, समरसता, सेवा और आध्यात्मिक जागरण का अनुपम पर्व है। वर्तमान समय में जब समाज अनेक प्रकार के वैचारिक, सामाजिक और धार्मिक विभाजनों से गुजर रहा है, तब भगवान जगन्नाथ की यह महायात्रा हमें स्मरण कराती है कि धर्म का वास्तविक उद्देश्य विवाद नहीं, बल्कि संवाद है। वर्चस्व नहीं, बल्कि समन्वय है और बाहरी आडम्बर नहीं, बल्कि अंतःकरण की पवित्रता है। यही इस महायात्रा का सनातन संदेश है कि जीवन का रथ तभी सही दिशा में चलता है जब उसमें श्रद्धा, सेवा, समरसता, आत्मसंयम और लोककल्याण के पहिए समान गति से चलते रहें। यही जगन्नाथ महायात्रा की शाश्वत महिमा है और यही इसकी वैश्विक प्रासंगिकता।